कुरुक्षेत्र

अगस्त, 1987 मूल्य 2 रुपये

हमारे नये राष्ट्रपति

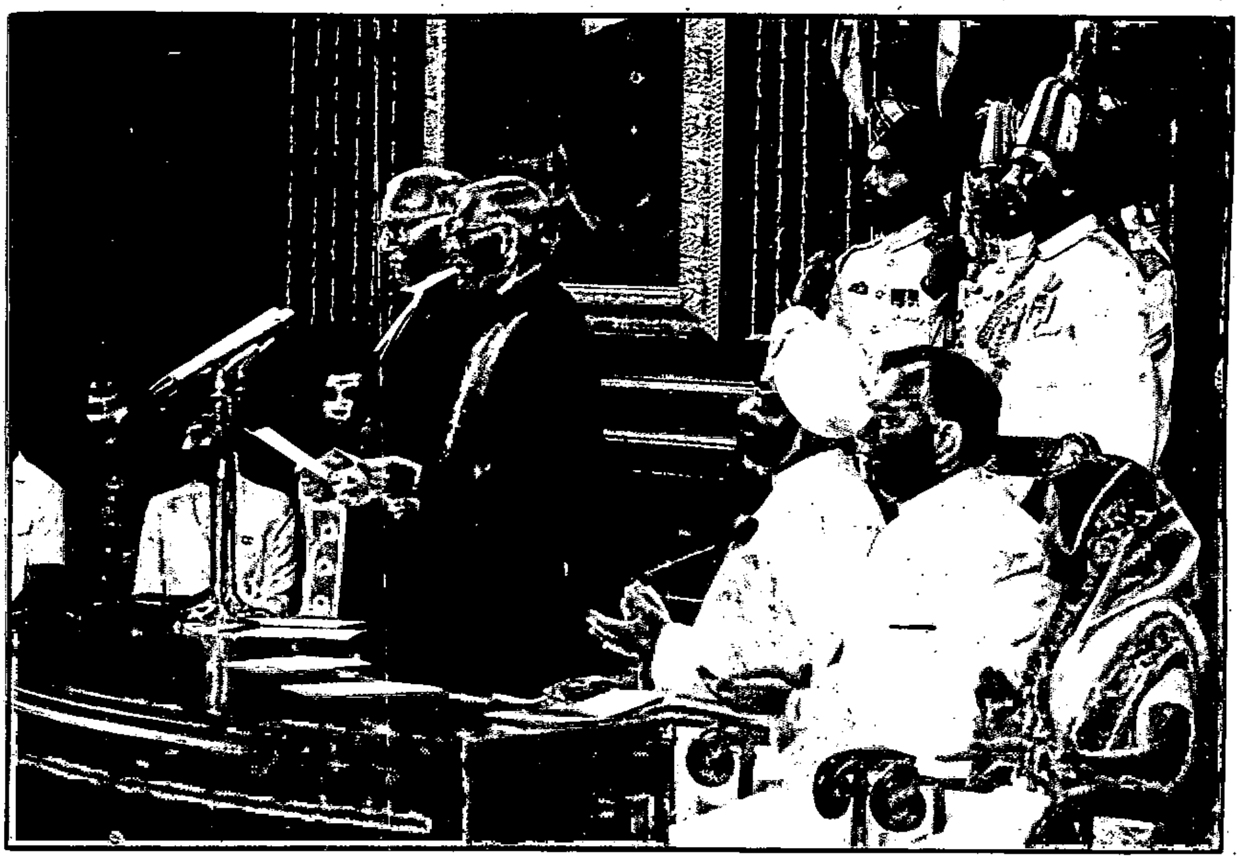

राष्ट्रपति पद की शपथ लेते हुए श्री रामस्वामी वेंकटरामन

भारत के नये राष्ट्रपति श्री रामस्वामी वेंकटरामन ने गत 25 जुलाई 1987 को पद एवं गोपनीयता की शपथ ली। वह देश के आठवें राष्ट्रपति हैं। श्री वेंकटरामन का जन्म तमिलनाडु में तंजावुर जिले के राजामादम गांव में 4 दिसम्बर 1910 को हुआ था।

1942 में महात्मा गांधी के आह्वान पर उन्होंने 'भारत छोड़ो' आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। उन्हें दो वर्ष की कैद की सजा मिली। स्वतंत्रता के बाद श्री वेंकटरामन 1950 में अस्थायी संसद के सदस्य चुने गए। 1952 में पहले तथा 1957 में दूसरे आम चुनावों में वह विजयी होकर संसद में आए। 1977 के संसदीय चुनावों में वह फिर संसद सदस्य बने। 1980 में कांग्रेस की सफलता के बाद श्रीमती गांधी ने उन्हें अपने मंत्रिमंडल में वित्त मंत्री नियुक्त किया। बाद में वह रक्षा मंत्री भी बने।

अगस्त 1984 में वह भारत के उपराष्ट्रपति चुने गए। उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति भी होता है। राज्य सभा के सभापति के रूप में श्री वेंकटरामन ने अपना कर्त्तव्य सूझ-बूझ से निभाया और अपनी राजनीतिक तथा बौद्धिक प्रतिभा और निष्पक्षता का परिचय दिया। श्री वेंकटरामन अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सक्रिय रहे हैं। वह सात बार संयुक्त राष्ट्र महासभा में भारत का प्रतिनिधित्व कर चुके हैं। 1958 में उन्होंने जिनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन और 1978 में वियना में अन्तर-संसदीय सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया।

पिछले लगभग 45 वर्षों के उनके राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन से यह स्पष्ट होता है कि वह न केवल सुलझे हुए राजनेता, बल्कि कर्मठ एवं निष्ठावान व्यक्ति हैं। उन्हें भारत की आम जनता, भारतीय संस्कृति, रीति-रिवाजों और कानून का बहुत अच्छा ज्ञान है।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 32 श्रावण-भाद्रपद शक 1909 अंक-10

इस अंक में	पृष्ठ संख्या
उपलब्धियों के 40 वर्ष डा. आर.बी. सक्सेना	2
ग्रामीण विकास में बाजारों की भूमिका डा. चन्द्रप्रकाश लाल	5
गन्ना उत्पादकों की अपनी विपणन व्यवस्था हरि विश्नोई	9
श्वेत क्रांति के लिए कृत्रिम गर्भाधान विनोद गुप्ता	11
संकल्प (कविता) प्रफुल्ल चन्द्र पाठक	12
ग्रामीण विकास में पंचायतों का योगदान एस.आर. कमल	13
आदिवासी महिलाओं का बदलता परिवेश प्रभात कुमार सिंघल	15
सिंचाई सुविधाओं का विस्तार और सुधार सुभाष चन्द्र "सत्य"	20
पर्यावरण : प्रदूषण और इसका निवारण नरेन्द्र सिंह	23
पेड़ लगाओ, प्रदूषण हटाओ खजान सिंह	28
सवेरा (कविता) शिशिर विक्रांत	29
खुशहाली देवेन्द्र उपाध्याय	30
सड़क दुर्घटनाएं कारण और निराकरण अभय कुमार जैन	32
मत्स्योद्योग विकास केदार नाथ गुप्त	35

'**कुरुक्षेत्र**' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी- कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए ।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है ।

●

'**कुरुक्षेत्र**' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए ।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406
एक प्रति : 2.00 रु.
वार्षिक चन्दा : 20 रु.

सहायक सम्पादक : गुरचरण लाल लूथरा

उप सम्पादक : राकेश शर्मा

सहायक निदेशक : राम स्वरूप मुंजाल
उत्पादन

आवरण पृष्ठ : मेघजी परमार

चित्र : फोटो प्रभाग एवं ग्रामीण विकास विभाग से साभार

उपलब्धियों के 40 वर्ष

डा. आर.बी. सक्सेना

सन् 1947 में स्वाधीनता के समय भारत की अर्थ व्यवस्था खराब हालत में थी। हमारी परम्परागत हस्तकलाओं का ह्रास हो चुका था तथा आधुनिक उद्योगों का अभाव था। बेरोजगारी बढ़ चुकी थी। दूसरे विश्वयुद्ध और देश के विभाजन से बड़ी तबाही हुई थी।

इन परिस्थितियों में स्वाधीन होने पर भारत के सामने मुख्य चुनौती यह थी कि युद्ध व बंटवारे की विभीषिका से उत्पीड़ित लोगों के संतोषजनक ढंग से पुनर्वास की जल्दी से जल्दी व्यवस्था की जाये तथा उसके साथ ही अर्थ व्यवस्था के त्वरित विकास के उपाय किये जायें। इस दिशा में भारत ने नियोजित आर्थिक विकास का मार्ग चुना, आगामी चालीस वर्षों के लिए प्रमुख लक्ष्य तय किये व इन्हें विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान प्राप्त करने का संकल्प लेकर काम में जुट गया। इनमें से कुछ प्रमुख लक्ष्य थे : (1) उत्पादन अधिक से अधिक बढ़ाना ताकि राष्ट्रीय तथा प्रति व्यक्ति आय का स्तर ऊंचा हो, (2) सबके लिये रोजगार की व्यवस्था, (3) औद्योगिकीकरण,(4) आय व सम्पदा में असंतुलन कम करना तथा (5) सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना। आइये देखें इन लक्ष्यों की दिशा में हम कितने सफल हो सकते हैं। सबसे पहले राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति आय को लें।

राष्ट्रीय आय के आंकड़ों के विकास से पता चलता है कि राष्ट्रीय आय में वृद्धि का क्रम जारी रहा है, यद्यपि इस वृद्धि की दर कम रही है। प्रति व्यक्ति आय में कुछ वृद्धि हुई है। इस वृद्धि दर के कम रहने का कारण यह था कि जनसंख्या में वृद्धि बड़ी तेजी से हुई। प्रथम योजना में राष्ट्रीय आय की विकास दर 3.5 से 4 प्रतिशत प्रति वर्ष रही है। विभिन्न योजनावधियों में विकास दर तृतीय योजना में 2.2 से लेकर छठी योजना की 5.2 प्रतिशत के बीच रही है। पूर्ण अर्थों में राष्ट्रीय आय 1950-51 में 16,731 करोड़ रुपये (1970-71 के मूल्यों के आधार पर) थी तथा यह 1984-85 में बढ़कर 57,014 करोड़ रुपये हो गई। विकास दर में अंतर विभिन्न कारणों जैसे अनुमान लगाने के समयआंकड़ों की उपलब्धि, कुछ कारणों के प्रभाव अधिक या कम मूल्यांकन करने आदि से उत्पन्न होता है।

प्रति व्यक्ति आय की सम्पूर्ण विकास दर 1.3 से 1.5 प्रतिशत प्रति वर्ष रही है। परन्तु द्वितीय, पांचवीं व छठी योजना में यह 2.0, 2.9, 2.9 प्रतिशत व तृतीय तथा चतुर्थ योजना में यह 0.3, 1.1 प्रतिशत रही। सम्पूर्ण अर्थों में (1970-71 के मूल्यों के आधार पर) प्रति व्यक्ति आय 1950-51 में 466 रुपये थी और 1984-85 में यह बढ़कर 771.50 रुपये हो गई। यह वृद्धि 65 प्रतिशत से अधिक थी। प्रति व्यक्ति आय व राष्ट्रीय आय के बीच अंतर जनसंख्या विस्फोट के कारण है।

यह विकास दर स्वाधीनता-पूर्व समय की तुलना में उल्लेखनीय रही है। सन् 1900-01 से 1945-46 के बीच राष्ट्रीय आय, कृषि उत्पादन व औद्योगिक उत्पादन की विकास दर क्रमशः 1.2, 0.3 व 2 प्रतिशत रही थी जबकि इन क्षेत्रों में वर्तमान विकास दर क्रमशः 3.5 से 4.0,2.7 व 6 प्रतिशत रही है। दूसरी बात यह है कि छठे दशक की मध्यावधि की तुलना में सातवें दशक की मध्यावधि से विकास दर अपेक्षाकृत तेज रही है। तीसरे, राष्ट्रीय आय में औद्योगिक क्षेत्र के योगदान में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है और कृषि क्षेत्र के योगदान में कहीं अधिक रही है। इसका अर्थ यह है कि औद्योपिक क्षेत्र अर्थ व्यवस्था का प्रमुख क्षेत्र बन गया है। लेकिन विकास दर का एक असंतोषजनक पहलू यह है कि अधिकांश समय यह लक्ष्य से कम रही है, फलतः खपत विकास दर बहुत कम रही है। सन्

1950-51 से 1985-86 तक प्रति व्यक्ति खपत की विकास दर बहुत कम अर्थात 1.1 प्रतिशत रही। सम्पत्ति में भारी असंतुलन रहा। जनसंख्या का काफी बड़ा भाग घोर गरीबी में दिन काट रहा है। सरकार द्वारा उनके लिये आय के साधन व काम धंधा दिलाने के उपायों का उन्हें नाममात्र ही लाभ मिल पाया है।

विकास में तेजी लाने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में सरकार द्वारा पूंजी निवेश पर नजर डालने से पता चलता है कि औद्योगिक विकास को उच्च प्राथमिकता दी गई है। (इसमें परिवहन, संचार, उद्योग, खनिज व बिजली क्षेत्र शामिल हैं)और प्रथम योजना में इस क्षेत्र पर सार्वजनिक साधनों के 36.8 प्रतिशत से लेकर सातवीं योजना में 58 प्रतिशत तक खर्च की व्यवस्था की गई है। औद्योगिक विकास पर जोर देते समय विशेष ध्यान पूंजीगत सामान (मशीनें) क्षेत्र विशेषतः मूल व प्रमुख उद्योगों जैसे मशीनें तैयार करने में सहायक मशीनों, उनमें काम आने वाले सामान जैसे इस्पात, बिजली, टरबो जेनरेटर, बायलर, धातु विज्ञान संबंधी यंत्र, मशीनी औजार, इलेक्ट्रॉनिक यंत्र आदि पर दिया गया।

कृषि क्षेत्र का दूसरा स्थान रहा है। कृषि व संबद्ध कार्यों तथा सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में पूंजी निवेश 21 से 34 प्रतिशत रहा है। ग्रामोद्योग व लघु उद्योग क्षेत्र में भी पूंजी निवेश का प्रावधान किया गया है क्योंकि रोजगार दिलाने व उपभोक्ता सामान के उत्पादन में इन उद्योगों का बड़ा महत्वपूर्ण योगदान है।

कृषि उत्पादन में विकास दर प्रथम योजना के बाद से 2.7 प्रतिशत प्रति वर्ष रही है जबकि स्वाधीनता से पूर्व यह मात्र 0.3 प्रतिशत ही थी। खाद्यान्नों के उत्पादन में भारी वृद्धि हुई है जिसके परिणामस्वरूप भारत अनाज के मामले में आत्मनिर्भर बन चुका है।

भूमि की उत्पादकता में भी सुधार हुआ है। सभी कृषि उत्पादों की दर में वृद्धि हुई है और इनकी उत्पादन दर जो 1950-51 में 76.0 प्रतिशत थी, 1984-85 में बढ़कर 142.9 प्रतिशत हो गयी। खाद्यान्नों की विकास दर तो और भी अधिक रही है। 1949-50 से लेकर 1964-65 तक यह विकास दर 1.4 प्रतिशत थी जो 1965 के पश्चात बढ़कर 2.3 प्रतिशत तक पहुंच गयी।

कृषि क्षेत्र में कुछ गुणात्मक सुधार भी हुये हैं। कृषि क्षेत्र का आधुनिकीकरण इनमें प्रमुख है। कृषि के तौर-तरीके अब अधिक वैज्ञानिक हो गये हैं। कृषि व उद्योग-इन दोनों क्षेत्रों का आपस में गहरा संबध बन चुका है।

सिंचाई सुविधा में विस्तार कृषि क्षेत्र की सफलता का एक महत्वपूर्ण कारण रहा है। देश में 6 करोड़ तीस लाख हैक्टेयर क्षेत्र के लिए सिंचाई की सुविधा कर दी गई है और इस प्रकार भारत इतनी विस्तृत सिंचाई सुविधा के मामले में पहला देश बन चुका है। कृषि के नये साधन, नयी तकनीकें, सुधरे बीज, कीटनाशक, उर्वरक, आधुनिक यंत्र, किसानों को जानकारी व सहायता के अलावा कृषि शिक्षा व अनुसंधान के लिए भी व्यापक सुविधायें जुटाई गई हें। केन्द्रीय संस्थान कृषि विश्वविद्यालय, अन्य सार्वजनिक व निजी संस्थान उन्नत किस्म के बीज, यंत्र, भूमि उपयोग, उर्वरक आदि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य व जानकारी उपलब्ध कराने के लिए कार्यरत है। इसके अतिरिक्त किसानों की सुविधा व सहायता के लिए उत्पादों की बिक्री व्यवस्था, कृषि में काम आने वाले सामान की आसानी से और समय पर उपलब्धता, भंडारण सुविधाओं आदि का भी जाल बिछा दिया गया है।

भूमि सुधारों के माध्यम से कृषि संबंधों में परिवर्तन लाने के लिए भूमि वितरण किया गया है। इसके फलस्वरूप जमींदारी प्रथा समाप्त कर दी गई व दो करोड़ से अधिक किसान सरकार के सीधे सम्पर्क में आये और उन्हें भूमि देकर उनका जीवन स्तर बेहतर बनाया गया।

गरीबों के लिए अनेक उपायों व कार्यक्रमों के माध्यम से उनका जीवन स्तर सुधारने के सफल प्रयास किए गये हैं। इनमें समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम आदि प्रमुख हैं।

परन्तु कृषि के क्षेत्र में अभी बहुत काम बाकी है। उत्पादन व उत्पादकता का विकास अधिक नहीं हो पाया है और विकास एकसार भी नहीं है। कहीं विकास बहुत अधिक हुआ है और कहीं कम। पशुपालन पर भी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। भूमि सुधारों में भी काम पर्याप्त नहीं हो पाया है। गांवों में गरीबों की संख्या अब भी ग्रामीण आबादी का करीब 40 प्रतिशत है।

औद्योगिक क्षेत्र में देश के औद्योगिक ढांचे के दो पहलू सामने आये हैं। एक तरफ तो आधारभूत व पूंजीगत सामान के उद्योगों का तेज़ी से विकास हुआ है। दूसरे, उद्योगों में विविधता आयी है। मध्यवर्ती व उपभोक्ता सामान के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है लेकिन यह अपेक्षाकृत कम रही है। आधारभूत उद्योगों का उत्पादन सूचकांक 1970 में 221.7 (1960=100 के आधार पर), 1980 में 164.6 (1970=100 के आधार पर) और 1985 में 251.2 रहा।

पूंजीगत सामान के लिये यह सूचकांक 1970, 1980 व 1985 में क्रमशः 224.3, 168.4 व 221.6 रहा। मध्यवर्ती सामान के लिए उत्पादन सूचकांक 1970 में 158.8 व 1985 में 178.3 रहा और उपभोक्ता सामान के लिये यह सूचकांक 154.7 (1970) से 162.0 (1985) रहा। 1951 में मशीनी औजार आदि तैयार करने वाले उद्योग बिलकुल नहीं थे लेकिन अब उद्योगों के कुल उत्पादन का 50 प्रतिशत हिस्सा इनका है। निर्यात व्यापार में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। 1950 में भारत के निर्यात व्यापार में तैयार सामान का प्रतिशत नगण्य था लेकिन अब निर्यात का 55 प्रतिशत से अधिक हिस्सा इसी का होता है।

उद्योगों में विविधता भी उल्लेखनीय रूप से आयी है। अब विभिन्न प्रकार का सामान तैयार करने वाले उद्योग मौजूद हैं जो साधारण चीजों से लेकर बड़े से बड़ा सामान बनाते हैं। कपड़े जैसे परम्परागत उद्योग से लेकर इंजीनियरी, आधारभूत व पूंजीगत उद्योग व उपभोक्ता सामान उद्योग विकसित हुये हैं। इनमें पेट्रोलियम, उर्वरक, मशीन, रेफ्रीजरेटर, टेलिविजन, स्कूटर, मोटर आदि उद्योग शामिल हैं। इनसे पता चलता है कि प्रौद्योगिकी व प्रबंधकीय क्षेत्र में भारत ने कितनी दक्षता हासिल कर ली है।

लेकिन, छठे दशक के मध्य से औद्योगिक उपयोग के सामान की विकास दर धीमी रही है। ढांचागत मंदी भी देखने में आयी है जैसे कि मूलभूत व पूंजीगत सामान उद्योग की विकास दर कम रही है। मांग में कमी, सार्वजनिक पूंजीनिवेश में कमी, असंतोषजनक आय वितरण इसके प्रमुख कारण हैं। औद्योगिक विकास भी एक समान नहीं हुआ है।

आधारभूत सुविधाओं का तेजी से विकास हुआ है। यातायात, संचार, बिजली, पानी, स्वास्थ्य आदि को प्राथमिकता दी गयी है। सड़कों, रेलवे की सुविधा के विस्तार के साथ यातायात के साधनों जैसे बस, ट्रक, रेल वैगन, इंजिन आदि का उत्पादन भी बढ़ गया है। जहाजों से ढुलाई भी बढ़ गयी है। हवाई यातायात का व्यापक विस्तार हुआ है। डाकतार, टेलीफोन सुविधा व्यापक रूप से उपलब्ध करायी गयी है। ताप, पन व परमाणु साधनों से बिजली उत्पादन कई गुना बढ़ा है लेकिन ये सुविधायें अभी हमारी आवश्यकताओं से काफी कम हैं।

विदेशों के साथ व्यापार अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण पहलू होता है। स्वाधीनता के बाद मूल्य व मात्रा की दृष्टि से भारत में व्यापार में बड़ी वृद्धि हुई है। 1946-47 में भारत का कुल व्यापार केवल 651 रुपये मूल्य का था। 1984-85 में बढ़कर यह 28,647 करोड़ रुपये हो गया। लेकिन इसमें आयात का अंश अधिक रहा। 1950-51 में आयात 650 करोड़ रुपये का हुआ जबकि 1984-85 में यह बढ़कर 17,092 करोड़ रुपये का हो गया। इसका एक कारण यह था कि उद्योगीकरण को और विशेषकर आधारभूत तथा भारी उद्योगों को उच्च प्राथमिकता दी गयी और इसके परिणामस्वरूप शुरू में मशीनों और फिर उनकी देखभाल व मरम्मत के लिये जरूरी सामान भारी मात्रा में आयात करना पड़ा। अनाज का आयात भी काफी मात्रा में करना पड़ा।

निर्यात व्यापार 1950-51 में 601 करोड़ रुपये का था जो 1984-85 में बढ़कर 11,555 करोड़ रुपये तक पहुंच गया। निर्यात व्यापार में वृद्धि 1970-71 के बाद उल्लेखनीय रही है और यह सात गुना से अधिक रही। सरकार ने निर्यात संवर्द्धन के अनेक उपाय किये हैं। नगद प्रोत्साहन, निर्यातकों को आयात की छूट, निर्यात नीतियों में उदारता, निर्यात के लिये विभिन्न प्रोत्साहन आदि इनमें प्रमुख हैं। आयात होने वाले सामान को देश में तैयार करने के लिये उपायों पर विशेष जोर दिया गया है। 1950-51 में भारत पूरी तरह आयात पर निर्भर करता था लेकिन अब यह निर्भरता कुल सप्लाई की 0.5 प्रतिशत ही है। भारत अनेक चीजों जैसे साईकल, सिलाई मशीन, अल्यूमीनियम आदि में आत्मनिर्भर हो चुका है। करीब 300 चीजें जो पहले आयात होती थीं अब देश में ही बनती हैं।

अब परम्परागत सामान के साथ नयी चीजें जैसे इंजीनियरी का सामान, लोहा, इस्पात, रसायन, चीनी आदि का निर्यात होता है। हमारे इंजीनियरी सामान ने विकसित देशों के बाजारों में भी धाक जमा ली है। सूती कपड़े, चमड़ा, चमड़े के सामान, काजू की गिरी, तंबाकू, काफी, मछली आदि के निर्यात में भी वृद्धि हुई है। भारत ने नये-नये देशों के साथ व्यापार संबंध स्थापित किये हैं। इनमें समाजवादी देश प्रमुख हैं।

इस प्रकार भारत की आर्थिक उपलब्धियां निश्चित रूप से बड़ी उत्साहवर्धक रही हैं। आर्थिक परिवर्तन हुये हैं व निरंतर हो रहे हैं।

अनुवाद : ओम प्रकाश दत्त

ग्रामीण विकास में बाजारों की भूमिका

डा. चन्द्रप्रकाश लाल
एवं
गणेश कुमार पाठक

किसी भी विकास कार्य के लिए ग्रामीण बाजारों का अधिक महत्व होता है। ग्रामीण विकास में ये ग्रामीण बाजार केवल पूरक का ही कार्य नहीं करते हैं, बल्कि कृषि व्यापार पद्धति के पुनर्गठन में पूर्णतः स्वतंत्र और उपयोगी भूमिका अदा करते हैं। ग्रामीण विकास की समग्र योजना के भीतर बाजार विकास कार्यक्रमों की खास जगह है। ग्रामीण खरीद-फरोख्त तंत्र के गठन और संचालन में सुधार एक ऐसा महत्वपूर्ण, सशक्त और समन्वयकारी तत्व है, जिससे सामान्य विकास के लक्ष्य पूरे हो सकते हैं और लघु कृषकों तथा दूसरे ग्रामीण समुदायों का समान रूप से लाभ मिल सकते हैं। इसके अतिरिक्त इन केन्द्रों से जनता को दैनिक उपयोग की प्रायः प्रत्येक वस्तुएं भी आसानी से उपलब्ध हो सकती हैं।

भारत में ग्रामीण बाजार पद्धति पर बाजार संबंधी विनियमों का काफी प्रभाव पड़ा है। विनियमित बाजारों की कल्पना तत्कालीन बाजार पद्धति की कई त्रुटियों के निवारण के उद्देश्य से की गई है, और पहला विनियमित बाजार चौथे दशक में स्थापित हुआ। जब विभिन्न राज्यों में कृषि उपज और उचित व्यापार पद्धतियों के लिए एक कानूनी आधार मिला। इन विनियमों में विनियमित बाजारों की स्थापना हो सकी और ऐसे हर बाजार का प्रशासन विनियमित बाजार समिति करती है। उक्त समिति में उत्पादकों और व्यापारियों का प्रतिनिधित्व रहता है। इन बाजारों का उद्देश्य गलत वजनों को तोलने की गलत प्रक्रियाओं को दूर करना, अत्यधिक बाजार शुल्कों में कमी लाना और व्यापारियों के बीच समन्वय स्थापित करना है।

दूसरे प्रकार के ग्रामीण बाजारों को प्राथमिक ग्रामीण बाजार कहा जाता है। इसके अन्तर्गत 'हाट' जैसे समय-समय पर लगने वाले बाजार आते हैं। भारत में अधिकांश लघु कृषकों के लिए ये ग्रामीण बाजार उनके खेतों की उपज को बेचने में महत्वपूर्ण हैं। इन बाजारों में लोग इकट्ठे होते हैं, थोक व्यापार होता है और फुटकर-वितरण भी होता है। इन बाजारों से दूर-दराज और पिछड़े क्षेत्र के किसानों को न केवल उनकी अतिरिक्त उपज की बिक्री की सुविधा मिलती है बल्कि उनके उपयोग की आवश्यकता की भी पूर्ति होती है। इन बाजारों में खरीद-फरोख्त की नियमित सुविधाएं नहीं होती, आमतौर पर वे सिर्फ जमीन के टुकड़े होते हैं, जहां खरीदने और बेचने वाले आपस में मिलते हैं। इसलिए इन बाजारों को बड़े बाजारों के परोक्ष लेन-देन केन्द्रों के रूप में समझा जाता है, क्योंकि सारी अतिरिक्त वस्तुएं अंत में उन बड़े बाजारों में पहुंच जाती हैं। आमतौर पर ग्रामीण मंडी के दिन निश्चित होते हैं।

बलिया जनपद में बाजार केन्द्रों का विकास

बलिया जनपद में बाजार केन्द्रों का विकास परिवर्तनशील रहा है। जहां साप्ताहिक बाजारों का ह्रास होता जा रहा है, वहीं दैनिक बाजारों का विकास हो रहा है, परन्तु दैनिक बाजारों की संख्या में अपेक्षाकृत कम वृद्धि हो रही है। वर्ष 1905-1907 में केवल बलिया, चितबड़ागांव, रानीगंज, बाँसडीह, मनियर, सिकन्दरपुर, सहतवार, रेवती,

रसड़ा, लखनेश्वरडीह, बिल्थरा, मुहम्मदपुर, ताड़ीबड़ा गांव, चकरा, हजौली एवं औंदी (कुल 18) बाजार केन्द्र थे।

बाजार केन्द्रों का अपेक्षाकृत तीव्र विकास स्वतंत्रता के पश्चात् हुआ। वर्ष 1961 एवं 1971 में इनकी संख्या क्रमशः 157 एवं 112 हो गई। सन् 1978 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार बाजारों की कुल संख्या 85 ही मिलती है। जबकि 1981 में यह संख्या 133 प्राप्त होती है। वर्ष 1961 से 1981 के मध्य जनपद में ग्रामीण बाजार केन्द्रों का वितरण तालिका-1 से स्पष्ट है।

तालिका I

बलिया जनपद में ग्रामीण बाजार केन्द्रों का वितरण

विकास खण्ड	1961	1971	1977-78	1981
रसड़ा	6	3	3	2
नगरा	15	6	5	20
चिलकहर	9	11	10	7
रतनपुरा	2	4	2	5
सीयर	15	15	7	3
बांसडीह	6	5	3	4
मनियर	9	5	2	0
रेवती	6	6	3	0
नवानगर	10	8	7	10
वेरूआरबारी	11	5	4	12
पन्दह	13	9	5	7
हनुमानगंज	7	4	4	12
सोहाव	9	5	5	5
गड़वार	12	3	7	4
दुबहड़	10	12	5	25
बलेहरी	9	2	4	10
बेरिया	6	6	8	2
मुरलीछपरा	0	2	1	5
योग जनपद	155	111	85	133

वर्ष 1981 की जनगणना पुस्तिका प्रकाशित न होने के कारण बाजारों का अध्ययन वर्ष 1977-78 को आधार मानकर किया गया है। वर्ष 1977-78 में जनपद में कुल 85 बाजार केन्द्र ही स्थित थे, जहां दैनिक साप्ताहिक एवं संयुक्त रूप से बाजार लगते हैं। वर्ष 1905-1907 के अधिकतर बाजार केन्द्र सम्प्रति नगरीय एवं अर्द्धनगरीय क्षेत्र के अन्तर्गत हैं। 1961 के बाद से बाजारों की संख्या में कमी आई है। क्योंकि साप्ताहिक बाजारों का स्थान दैनिक बाजारों ने ले लिया है। वर्ष 1961 में कुल 8 दैनिक बाजार थे, जिनकी संख्या बढ़कर वर्ष 1977-78 में 73 हो गई। अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण जनसंख्या की क्रय शक्ति में वृद्धि के साथ ही परिवहन विकास के कारण उत्पन्न बाजार सेवा क्षेत्र में विस्तार के परिणाम स्वरूप दैनिक बाजार के लिए आवश्यक न्यूनतम मांग स्तर एक ही स्थान पर उपलब्ध हो जाता है। साप्ताहिक बाजारों की संख्या 1961 में 149 थी परंतु 1977-78 में घट कर यह मात्र 12 रह गई। इससे स्पष्ट है कि साप्ताहिक बाजारों में जन-रुचि कम हो रही है तथा समीपवर्ती दैनिक बाजारों की ओर आकर्षण बढ़ रहा है जिससे दैनिक बाजरों का विकास अधिक हुआ है। 1961 से 1977-78 के मध्य साप्ताहिक बाजारों का ह्रास हुआ है तथा इस अन्तराल में कुल 72 साप्ताहिक बाजारों का विघटन हुआ है जिसका मुख्य कारण दैनिक बाजारों का विकास, यातायात का विकास एवं नगर तथा अर्द्धनगरों का विकास रहा है, जो तालिका-2 से स्पष्ट है।

तालिका-2

विभिन्न कारणों द्वारा बाजारों का ह्रास 1961-78

विकास खण्ड	यातायात के विकास के कारण	नगरीय विकास के कारण	दैनिक बाजारों के विकास के कारण	योग
सोहाव	1			3
गड़वार	1		2	1
हनुमानगंज		2	3	5
दुबहड़	4	1	4	9
बलेहरी			2	2
बेरिया			4	4
मुरलीछपरा			1	1
रेवती		1	2	3
बांसडीह	2		1	3
बेरूआरबारी	1	1	3	5
मनियर	2		1	3
नवानगर			1	1
पन्दह	2		2	4
रतनपुरा			4	4
नगरा			6	6
रसड़ा	2	1		3
चिलकहर	2		3	5
सीयर	1	4	5	10
योग	18	10	44	72

बाजार केन्द्रों का वितरण

वर्ष 1977-78 में रसड़ा, बांसडीह एवं बलिया तहसीलों में बाजारों की संख्या क्रमशः 27, 24 एवं 34 जो 1971 की तुलना में कम है। क्षेत्रीय दृष्टिकोण से रसड़ा तहसील में सर्वाधिक संख्या चिलकहर विकास खण्ड में (10) तथा न्यूनतम रतनपुरा में (2) है। बासडीह तहसील में सबसे अधिक संख्या नवानगर (7) एवं न्यूनतम मनियर (2) खण्ड में है। जबकि बलिया तहसील में सर्वाधिक संख्या बैरिया (8) तथा न्यूनतम संख्या मुरलीछपरा (1) खण्ड में है।

बाजारों का वितरण ग्रामीण जनसंख्या एवं धरातलीय रचना से पूर्णतः प्रभावित है। गंगा, घाघरा एवं छोटी सरयू नदियों के बाढ़ ग्रस्त तथा आंतरिक तालों के जलप्लावित क्षेत्र में बाजारों की संख्या कम है। जबकि उच्च क्षेत्रों में जहां बाढ़ नहीं आती है तथा जहां सड़कों का विकास अधिक हुआ है, वहां बाजारों की संख्या अधिक है। रेल मार्ग के क्षेत्रों में भी बाजारों की संख्या अधिक है।

बाजार केन्द्रों का आकार

बाजार केन्द्रों के आकार का निर्धारण जनसंख्या, दुकानों की संख्या एवं दुकानों के प्रकार के आधार पर किया गया है।

1. जनसंख्या के आधार पर बाजार केन्द्रों का आकार

वर्ष 1977-78 में प्राप्त 85 बाजार केन्द्रों में से 52 बाजार केन्द्रों की संख्या 1000-5000 के मध्य है। बलिया, बांसडीह एवं रसड़ा तहसीलों में ऐसे बाजारों की संख्या क्रमशः 17, 16 एवं 19 है। कुल 22.35 प्रतिशत बाजार केन्द्र 1000 से कम तथा 3.53 प्रतिशत बाजार केन्द्र 10,000 से अधिक जनसंख्या के हैं। शेष 12.94 प्रतिशत बाजार केन्द्र 5,000 से 10,000 के मध्य जनसंख्या वाले हैं। बलिया तहसील में सर्वाधिक जनसंख्या बैरिया बाजार केन्द्र (12,764) में तथा न्यूनतम श्रीपालपुर (326) में हैं। शेष बाजारों की जनसंख्या 1200 से 1800 के मध्य है। बांसडीह तहसील में सर्वाधिक जनसंख्या पूर (10,972) बाजार केन्द्र की है जबकि सबसे कम जमालपुर (856) की है। शेष बाजारों की जनसंख्या 1100 से 5700 के मध्य है। रसड़ा तहसील में सर्वाधिक जनसंख्या हल्दी रामपुर (5496) बाजार केन्द्र की है जबकि सबसे कम सीयर की है। शेष बाजारों की जनसंख्या 315 से 5042 के मध्य है। बाजारों की जनसंख्या के ऊपर उस केन्द्र की स्थिति प्राचीनता एवं सड़कों के विकास का विशेष प्रभाव पड़ा है।

2. दुकानों की संख्या के आधार पर बाजारों का आकार

जनपद के लगभग 52.94 प्रतिशत बाजार केन्द्रों में दुकानों की संख्या 25 से 50 के मध्य है तथा 21.18 प्रतिशत बाजारों में 25 से कम दुकानें हैं। मात्र 3.54 प्रतिशत बाजारों में ही दुकानों की संख्या 100 से अधिक है। 14.11 प्रतिशत बाजारों में दुकानों की संख्या 50 से 75 एवं 8.23 प्रतिशत बाजारों में दुकानों की संख्या 75-100 है। जनपद में सबसे बड़ा बाजार कोटवां रानीगंज (242) बैरिया खण्ड में स्थित है तथा सबसे कम छोटा बाजार हजौली (12) चिलकहर खण्ड में है। रतनपुरा (224), बैरिया (105), लालगंज (90), फेफना (94) बिल्थरा बाजार (97) एवं बेरुआरबारी (98) जनपद में अन्य बड़े बाजार हैं।

3. दुकानों के प्रकार के आधार पर बाजारों की संख्या

जनपद की बाजारों में स्थित दुकानों का सर्वेक्षण उनमें उपलब्ध वस्तुओं की प्राथमिकता के आधार पर कुल 25 वस्तुओं का सर्वेक्षण किया गया है। जनपद में मात्र दो बाजार (कोटावा रानीगंज तथा रतनपुरा) में ही 25 प्रकार की दुकानें हैं। जबकि इनकी न्यूनतम संख्या हजौली, किशोरगंज, आसन एवं विसौली (प्रत्येक में 10) बाजारों में हैं। दुकान प्रकार के आधार पर जनपद में बाजारों की संख्या तालिका-3 से स्पष्ट है।

तालिका-3

बाजार में विभिन्न प्रकार की दुकानों की संख्या

दुकानों के प्रकार	बाजारों की संख्या	प्रतिशत
22-25	8	9.4
18-21	14	16.5
14-17	34	40.0
10-13	29	34.1
योग	85	100

बाजारों में क्रेता-विक्रेता की औसत संख्या

जनपद के लगभग 34.2 प्रतिशत बाजारों में 500 से कम तथा 8.25 प्रतिशत बाजारों में 500 से 1000 के मध्य क्रेता-विक्रेता आते हैं। कुल 11.75 प्रतिशत बाजारों में 1000-1500 एवं 16.45 प्रतिशत बाजारों में 3000 से अधिक क्रेता-विक्रेता आते हैं। 10.39 प्रतिशत बाजारों में क्रेता-विक्रेता की संख्या 2,000 से 3,000 के मध्य पाई गई है।

बाजारों की कार्यविधि

जनपद में बाजारों की संख्या में जहां ह्रास हो रहा है, वहीं उनके कार्यकाल में विशेष परिवर्तन आया है। वर्ष 1961 में कुल 8 बाजार प्रतिदिन के साथ सप्ताह में दो दिन तथा 34 बाजार एक दिन लगते थे। जिनकी संख्या क्रमशः 1971 तक 6 एवं 13 हो गई, क्योंकि 1971 तक इनमें से कुछ नगरीय एवं अर्द्धनगरीय केन्द्र के अन्तर्गत हो गये। नगरीय केन्द्रों में भी (बलिया नगर में) साप्ताहिक बाजार लगता है। जिससे स्पष्ट है कि उनका ग्रामीण चरित्र समाप्त नहीं हुआ है। 1977-78 में प्रतिदिन लगने वाले बाजारों की संख्या कुल 73 थी जिसमें 11 बाजारों में एक दिन तथा 24 में दो दिन विशेष बाजार लगते हैं। कुल 12 बाजार साप्ताहिक लगते हैं, जिनमें 3 बाजारों में एक दिन तथा 9 में दो दिन क्रय-विक्रय होता है। सप्ताह में 3 दिन लगने वाले बाजार नहीं हैं, जबकि 1961 में दो थे।

साप्ताहिक बाजारों रहित दैनिक बाजारों की संख्या रसड़ा बांसडीह एवं बलिया तहसीलों में क्रमशः 7.10 एवं 21 दैनिक के साथ साप्ताहिक (एक दिन) बाजारों की संख्या क्रमशः 4,1 एवं 6 है। दैनिक के साथ साप्ताहिक (दो दिन) बाजारों की संख्या क्रमशः 11,9 एवं 4 है। केवल साप्ताहिक (दो दिन) बाजारों की संख्या रसड़ा, बांसडीह एवं बलिया तहसीलों में क्रमशः 3,3 एवं 3 है तथा साप्ताहिक (एक दिन) बाजारों की संख्या रसड़ा एवं बांसडीह में क्रमशः 2 एवं 1 है।

बाजारों का कार्यात्मक प्रारूप

बलिया जनपद एक कृषि प्रधान क्षेत्र है, जिससे कृषि उत्पाद तथा उससे संबंधित वस्तुओं का विनिमय प्रमुख है। जनपद में सर्वेक्षण के दौरान कुल 3984 दुकानें विभिन्न कार्यों में कार्यरत रहीं। उनके कार्यात्मक स्वरूप के आधार पर स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में मिश्रित दुकानों की अधिकता है। अलग-अलग वस्तुओं की विशेषीकृत दुकानें कम हैं, जिससे स्पष्ट है कि इस कार्य में अभी पूर्ण विकास नहीं हुआ है। जनपद सर्वाधिक दुकानों की संख्या किराना (17.57 प्रतिशत) की है। पान 8.61 प्रतिशत एवं गल्ला 7.75 प्रतिशत है। मिठाई एवं सिलाई की 6.87 प्रतिशत, कपड़ा 6.24 प्रतिशत एवं साइकिल मरम्मत की दुकानें 6.05 प्रतिशत हैं। सीमेंट (0.35 प्रतिशत) घड़ी मरम्मत (0.42 प्रतिशत) एवं ट्रेक्टर मरम्मत (0.45 प्रतिशत) की दुकानों की संख्या कम है।

इस प्रकार इन विभिन्न प्रकार की दुकानों के द्वारा ये बाजार जनपद के विकास में अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं। अतः इन बाजारों का सुव्यवस्थित विकास आवश्यक है। क्योंकि सुव्यवस्थित और अच्छी तरह से संचालित बाजार ग्रामीण विकास केन्द्र का एक छोटा रूप ही है और यह बाजार स्थानीय उत्पादन की सुव्यवस्थित खरीद-फरोख्त में सहायक होता है। कभी-कभी ऐसी भी जानकारी मिलती है कि कुछ हालातों में विनियोजित बाजार स्थानीय उत्पादन को बढ़ाने के केन्द्र के रूप में भी कार्य कर सकता है। इन बाजारों को ही विकसित कर सेवा केन्द्र का रूप प्रदान किया जा सकता है। इन केन्द्रों को विकसित करने में भी कम ही लागत लगेगी, क्योंकि इन बाजारों में अधिकांश सुविधायें तो पहले ही मौजूद हैं। इस प्रकार यदि ग्रामीण बाजारों का समुचित विकास कर दिया जाए तो इससे न केवल क्षेत्र का आर्थिक ढांचा ही मजबूत होगा, बल्कि क्षेत्र का समग्र विकास भी सम्भव हो सकेगा और साथ ही साथ ये केन्द्र नगरोन्मुख प्रवास को भी रोकने में सक्षम होंगे।

प्रध्यापक, भूगोल विभाग
श्री मुरली मनोहर टाउन महाविद्यालय,
बलिया

उत्तर प्रदेश में

गन्ना उत्पादकों की अपनी विपणन व्यवस्था

हरि विश्नोई

उत्तर प्रदेश देश के प्रमुख चीनी उत्पादक राज्यों में से है। करीब 37 जिलों के 45 हजार गांवों में बसे 28 लाख से भी अधिक कृषक अपनी गन्ने की उपज सहकारी गन्ना विकास समितियों के माध्यम से चीनी मिलों को बेचते हैं। यह प्रथा एक सुव्यवस्थित ढांचे के अन्तर्गत चल रही है। वर्षों पूर्व निजी क्षेत्र के मिल मालिकों द्वारा किए जाने वाले शोषण से बचने के लिए जो रास्ता सहकारिता के माध्यम से गन्ना कृषकों ने ढूंढ़ निकाला, आज उस पर चलने वालों की संख्या बहुत अधिक है। साथ ही साथ प्राथमिक स्तर पर गन्ना विपणन का कार्य प्रमुख रूप से करने वाली इन समितियों ने अपने सदस्यों का समूचा सामाजिक आर्थिक जीवन ही बदल कर रख दिया है।

चीनी मिल गेट के अलावा स्थान-स्थान पर गन्ना क्रय केंद्र खोले जाते हैं जिन पर चीनी मिल कर्मचारी के अलावा गन्ना सहकारी समिति के लिपिक भी रहते हैं। गन्ना कृषकों में अनिश्चितता का वातावरण समाप्त करने के लिए चीनी मिलों को सुरक्षित क्षेत्र घोषित करने के आदेश 1988-89 तक के लिए पारित कर दिए गए हैं।

चीनी मिलों को गन्ना पूर्ति के लिए राज्य सरकार द्वारा बनाई गयी नीति की घोषणा, पिराई सीजन शुरू होने से पूर्व ही कर दी गई थी। जिससे कि किसानों को समय रहते गन्ने की बुवाई सुनिश्चित करने का अवसर मिल सके। नई गन्ना आपूर्ति नीति के अन्तर्गत उत्तर-प्रदेश में किसानों द्वारा वर्ष 1982-83 से 1985-86 तक के चार वर्षों में मिल को सप्लाई किए गए गन्ने की औसत मात्रा को वर्ष 1986-87 के लिए गन्ने का बेसिक कोटा माना गया। लेकिन जिन किसानों के पास बेसिक कोटे से अधिक गन्ना था उन्हें चीनी मिल की मांग के अनुसार अतिरिक्त सट्टा कराने की सुविधा भी प्रदान की गई। छोटे किसानों को राहत देने के उद्देश्य से जिनका सट्टा पश्चिमी क्षेत्र में 40 क्विंटल एवं पूर्वी क्षेत्र में 25 क्विंटल या इससे कम था, प्राथमिकता के आधार पर चीनी मिल चलाने के 90 दिनों के अन्दर उनका गन्ना चीनी मिलों को सप्लाई कराए जाने की व्यवस्था है।

गन्ना एक ऐसी नकदी फसल है जिसकी विपणन व्यवस्था बहुत चुस्त होनी चाहिए। क्योंकि इसके भण्डारण की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती। खेत से कटने के बाद तुरन्त ही गन्ने का रस सूखने लगता है और चीनी का परता कम होने लगता है। अतः जहां एक ओर इसमें परिवहन व्यवस्था महत्वपूर्ण रखती है वहीं दूसरी ओर यह देखना भी किसान के लिए बहुत जरूरी होता है कि वह कितनी मात्रा में गन्ना पैदा करे।

उत्तर-प्रदेश में सार्वजनिक, सहकारी और निजी क्षेत्र में कुल 102 चीनी मिल कार्यरत हैं तथा 138 सहकारी गन्ना विकास समितियां इन मिलों को गन्ना आपूर्ति करने की व्यवस्था करती हैं। गन्ना उत्पादकों को गन्ना मूल्य का भुगतान उचित दर एवं समय से कराने में भी इन सहकारी समितियों का योगदान महत्वपूर्ण रहता है।

गन्ना सहकारी समितियां सदस्य कृषकों को कृषि यन्त्र, ऋण, उर्वरक तथा कीटनाशक भी उपलब्ध कराती है ताकि उनके गन्ना उत्पादन के क्षेत्रफल तथा प्रति एकड़ उपज में वृद्धि हो सके। इसके अतिरिक्त गन्ना सहकारी समितियों द्वारा फरवरी 1985 से नाबार्ड योजना के अन्तर्गत गन्ना उत्पादकों को रियायती दर पर उत्पादक ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है जो 10.50 प्रतिशत से 12/50 प्रतिशत तक की ब्याज दर पर उर्वरक एवं कीटनाशक दवाओं के रूप में दिया जाता है। इस योजना के अन्तर्गत सहकारी गन्ना विकास समितियों को 2.15 प्रतिशत का लाभ उपलब्ध है। जिसमें से एक प्रतिशत प्राथमिक स्तर पर कृषि ऋण सहकारी समितियों को तथा शेष 1.75 प्रतिशत सहकारी गन्ना विकास समितियों को प्राप्त होता है। परिणामस्वरूप इस योजना से समितियों की आर्थिक स्थिति भी अवश्य ही मजबूत हो सकेगी।

बचत योजना को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से उत्तर-प्रदेश के गन्ना किसानों द्वारा गन्ना सहकारी समितियों के माध्यम से "कृषि निवेश निधि" योजना में 10.16 करोड़ रूपया जमा किए गए और इसके दुगने तक कम ब्याज पर गन्ना कृषकों को ऋण उपलब्ध कराया गया। इसके अतिरिक्त वर्ष 1984-85 में ऋण वसूली 61.3 प्रतिशत तथा वर्ष 85-86 में 65.68 प्रतिशत रही। गन्ना सहकारी समितियों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए गन्ना आपूर्ति पर प्राप्त कमीशन की दर पर 12 पैसे प्रति क्विंटल से बढ़ाकर नवम्बर-85 से 35 पैसे प्रति क्विंटल कर दी गई है, जो चीनी मिलों से समितियों को मिलती है।

उत्तर प्रदेश में कार्यरत 138 गन्ना विकास सहकारी समितियों की एक शीर्ष संस्था 'उत्तर प्रदेश सहकारी गन्ना संघ" भी है जिसका मुख्यालय लखनऊ में है। इसकी स्थापना 11 अगस्त 1949 को की गई थी। ये समितियों, उनके सदस्यों तथा चीनी मिलों के हितों की रक्षा करने तथा परस्पर अच्छे सम्बन्ध बनाए रखने के अतिरिक्त आवश्यकता पड़ने पर उचित मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से की गई थी।

इस शीर्ष संस्था द्वारा 'गन्ना' मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी नियमित रूप से किया जाता है। जिससे महत्वपूर्ण योजनाओं की जानकारी गन्ने की उन्नत ढंग से खेती करने की विधियां कीट एवं रोगों की रक्षा एवं विभागीय उपलब्धियों की सूचना सदूरवर्ति क्षेत्रों के किसानों तक पहुंचायी जाती है।

कुल मिला कर उत्तर-प्रदेश में गन्ना विकास एवं चीनी उद्योग के क्षेत्र में वर्ष 1986-87 में जो नए-नए कीर्तिमान उपलब्धियों के रूप में उभर कर सामने आए हैं उनमें गन्ना विकास विभाग के अतिरिक्त गन्ना सहकारी समितियों का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा है। फलत: वर्ष 1986-87 में गन्ने की औसत उपज 51.35 मी०टन प्रति हैक्टे० तथा चीनी उत्पादन सत्र 1985-86 में 16.48 लाख मी०टन रहा। वर्ष 1986-87 में चीनी मिलों के लिए सुरक्षित क्षेत्र बढ़ाकर 16.59 लाख हैक्टे० हो गया। कुछ गन्ना समितियों द्वारा विद्यालय एवं अस्पताल भी किसानों के कल्याणार्थ चलाए जा रहे हैं। अत: इस बात के संकेत स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगे हैं। कि उत्तर-प्रदेश में गन्ना विकास तथा चीनी उद्योग दोनों में ही सहकारिता के माध्यम से उत्तरोत्तर वृद्धि की ऐसी नयी लहर आ रही है जो गन्ना उत्पादकों के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन को उन्नत दिशा प्रदान कर समूचे राज्य के कृषि एवं औद्योगिक विकास की गति तीव्र करेगी।

एच. 88- शास्त्री नगर
मेरठ (उ.प्र.)

शिवजीराम की कहानी-उसी की जबानी

हाथ से कैनिंग करते, कभी डिब्बों की मरम्मत करते अपनी धुन में सवार शिवजीराम, करते चले जा रहे हैं अपना काम।

यह कोई गद्य-रचना या कविता का शीर्षक नहीं अपितु शिवजीराम की सफल जीवन कहानी का संक्षिप्त विवरण है।

आज से तीन दशक पूर्व इन्हीं शिवजीराम ने आवेश में आकर एक व्यक्ति की हत्या कर दी थी जिसके कारण उसे जेल जाना पड़ा। 1969 में गांधी जी की 100 वीं वर्षगांठ के अवसर पर इसे भी अभयदान दे दिया गया। शिवजीराम ने जेल में कुर्सियों की कैनिंग करना लुहारी कार्य आदि सीख लिया। आज यह एक कुशल लुहार व कैनिंग का मास्टर है।

जोधपुर के अजमेर-जयपुर मार्ग पर नीम के पेड़ के नीचे बैठकर उसने अपनी मेहनत से इतना जमा कर लिया है कि उसने उसी मार्ग पर पक्का मकान, दुकान बना लिये हैं तथा जोधपुर के पास ही सिंचित क्षेत्र पर एक कुआं बनवा लिया है।

शिवजीराम ने कभी अतीत की ओर मुड़के नहीं देखा है और चलता जा रहा है अपनी मंजिल की ओर। उसे हाल ही में केन्द्रीय वितमंत्री द्वारा घोषित ऋण योजना के तहत स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की राई का बाग शाखा द्वारा 5 हजार रुपये का ऋण स्वीकृत किया गया है जिससे वह अपने व्यापार का और विस्तार करने की योजना चला रहा है।

शिवजीराम ने अपने बेटे को भी अपनी कला का कर्म दूत बना दिया है। शिवजीराम के कर्म, ईमान, धन संचय आदि गुणों से ऐसे ही पीड़ित अन्य लोगों को भी प्रेरणा लेनी चाहिये। □

बजरंग सिंह शेखावत
क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी
जोधपुर

श्वेत क्रांति के लिए कृत्रिम गर्भाधान

विनोद गुप्ता

श्वेत क्रांति अथवा दुग्ध उत्पादन करने के लिए पशुओं का स्वास्थ्य और उन्नत किस्म का होना बहुत जरूरी है। लेकिन दुर्भाग्य से हमारे पशु न तो स्वस्थ ही हैं और न ही इनकी नस्ल ही उत्कृष्ट किस्म की है। परिणामस्वरूप वांछित मात्रा में दूध उत्पादन नहीं हो पा रहा है। यदि हम इनकी नस्ल सुधारने पर ध्यान दें तो इससे न केवल पशु स्वस्थ ही रहेंगे, अपितु दूध उत्पादन भी कई गुना बढ़ सकता है। जरूरत इस बात की है कि इनकी नस्ल सुधारी जाए।

पशुधन विकास के लिए अपनाई गई नीति का उद्देश्य पशुओं की चुनी हुई नस्लों के प्रजनन से देशी नस्लो की उत्पादकता बढ़ाना होना चाहिए। इसके लिए जर्सी और हॉल्सटीन जैसे मान्य शीतोष्ण नस्ल के विदेशी सांड के साथ देशी पशुओं के संकरण को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

पशुओं की नस्ल सुधारने में विदेशी सांड दो प्रकार से अपना योगदान दे सकते हैं – एक तो यह कि विदेशी सांडों से देशी गायों को प्राकृतिक संयोग के माध्यम से गर्भाधान कराया जाए। दूसरा तरीका यह हो सकता है कि बिना प्राकृतिक संयोग कराए कृत्रिम रूप से गर्भाधान कराया जाए। हम पहली स्थिति को चुनते हैं तो गायों की संख्या को देखते हुए अच्छी नस्ल के विदेशी सांड उतनी मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं जिनसे कि प्राकृतिक संयोग के जरिए गायों को गाभिन कराया जा सके। इसमें दूसरी दिक्कत पशु पालकों को यह आएगी कि सभी पशु पालकों को ये सांड रखने पड़ेंगे जो अत्यधिक महंगा सौदा है और फिर प्राकृतिक संयोग से गायों को विभिन्न यौन रोग होने की संभावना रहती है। इसलिए इन सब परेशानियों से बचने के लिए ही कृत्रिम गर्भाधान विधि का चुनाव किया जाता है। कृत्रिम गर्भाधान क्या है, इस पर भी विचार करना आवश्यक है। इसमें नर और मादा का प्राकृतिक संयोग हुए बिना ही वंश वृद्धि की जाती है। कृत्रिम योनि की सहायता से नर का वीर्य संकलित किया जाता है जिसे एक विशेष रासायनिक घोल में रखा जाता है। इस वीर्य का प्रवेश मादा में करवाकर उसे गर्भाधान कराया जाता है। चुने हुए सांड का हिमित वीर्य (तापक्रम - 176 डिग्री से.) गाय के गर्भाशय में रखने की प्रक्रिया ही केवल कृत्रिम होती है। बाकी सभी विकास की प्रक्रियाएं नैसर्गिक जैसी होती हैं।

विदेशी सांडों के वीर्य को अत्याधुनिक वैज्ञानिक रीति से जमा करके वर्षों तक तीन प्रकार से सुरक्षित रखा जा सकता है। स्वाभाविक तापमान पर बर्फ में तथा जमाकर अथवा फ्रोजन करके – वैसे बर्फ में रखा हुआ वीर्य तीन दिन के बाद अपनी उपयोगिता खो देता है और दुर्लभ वीर्य नष्ट हो जाता है। उसे लंबे समय तक सजीव बनाए रखनेके लिए अत्यंत ठंडे तरल गैस में जमाकर रखा जाता है। एक बार जम जाने के पश्चात वह वर्षों तक खराब नहीं होता और उसका उपयोग गर्भाधान के लिए किया जा सकता है। इस विधि का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे प्रजनन ऋतु का पूर्ण लाभ उठाया जा सकता है।

कृत्रिम गर्भाधान विधि का महत्व इसलिए भी अधिक है क्योंकि इसका प्रयोग व्यापक तौर पर किया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्राकृतिक संयोग के माध्यम से कोई एक सांड अधिक से अधिक एक वर्ष में सौ गायों को गाभिन कर सकता है किंतु यदि उससे प्राकृतिक संयोग स्थापित न कराके उसके वीर्य से कृत्रिम गर्भाधान किया जाए तो एक वर्ष में हजारों गायें गाभिन हो सकती हैं। यदि प्राकृतिक गर्भाधान किया जाता है तो उससे शुक्राणओं की बहुत बर्बादी होती है क्योंकि एक बार के वीर्य में कोई 500 करोड़ के आसपास शुक्राणु निकलते हैं, जबकि गर्भाधान के लिए तो एक-डेढ़ करोड़ शुक्राणु ही पर्याप्त हैं। अब यदि कृत्रिम गर्भाधान कराया जाए तो शुक्राणुओं का अपव्यय तो रुकेगा ही, वीर्य की उत्पादन शक्ति भी कई गुना बढ़ जाएगी। अतः हफ्ते में एक या दो बार इन अच्छी नस्ल के सांडों का वीर्य संकलन की औसत मात्रा 5 मिलीलीटर होती है तथा प्रत्येक मिलीलीटर में सौ

करोड़ के लगभग शुक्राणुओं की संख्या होती है। इसी आधार पर एक बार के वीर्य संकलन से 500 करोड़ शुक्राणु मिलते हैं।

गायों की नस्ल सुधारने हेतु उन्नत नस्ल के विदेशी सांडों के वीर्य का प्रयोग करना चाहिए। क्योंकि अच्छी नस्ल के सांडों के वीर्य से ही अधिक दूध देनेवाली गाय अथवा अधिक भार वहन करने की क्षमता रखने वाले बैल प्राप्त किए जा सकते हैं। कृत्रिम गर्भाधान से जो उन्नत किस्म की गायें पैदा होती हैं, इनकी दूध देने की मात्रा कई गुना बढ़ जाती है और वे कम उम्र में ही, अधिक समय तक दूध देती हैं। यदि विदेशी सांडों के वीर्य से देशी गायों का कृत्रिम गर्भाधान कराया जाए तो दो वर्ष की उम्र से ही वह गाय दूध देने लगेगी तथा प्रतिदिन 10-12 लीटर दूध सरलता से प्राप्त हो सकता है।

कृत्रिम गर्भाधान को लेकर पशु पालकों में कुछ भ्रांतियां विद्यमान हैं जिसका निराकरण करना भी बहुत जरूरी है। कृत्रिम गर्भाधान से गाय की प्राकृतिक इच्छा वासना आदि मारे जाने का प्रश्न ही नहीं है। गाय प्रजनन योग्य और स्वस्थ हो तो वह किसी भी तरीके से गाभिन हो जाएगी। अतः एक बार कृत्रिम गर्भाधान होने के पश्चात अगली बार वह देशी सांड से गाभिन हो सकती है। गाय गरम होने के बाद 12 से 16 घंटे के बीच गाभिन हो सकती है। यदि गर्भवती गाय को पौष्टिक आहार खिलाया जाए तो गाय को जनने में कष्ट होने अथवा बच्चे के उलझ जाने की संभावना नहीं रहती। संकर बैल खेती में भी काम आते हैं। ये बैल सरलता से हल और गाड़ी, दोनों में जुत सकते हैं। इतना ही नहीं ये बैल देशी बैलों की तुलना में अधिक ताकतवर होते हैं। संकर पशुओं को समय-समय पर छूत की बीमारियों से बचाने के लिए आवश्यक टीके लगवाते रहना चाहिए।

दीपक निवास
156 महात्मा गांधी मार्ग,
बड़वानी-451551
(म.प्र.)

संकल्प

प्रफुल्लचंद्र पाठक

बड़ी मुसीबत से पाई जो आजादी हमने
उसकी रक्षा में दे देंगे प्राण भी हम अपने
बड़ी लगन से सींचा जिस बगिया को हमने
उसकी शाखाओं को हम हर्गिज न झुलसने देंगे
बड़ी मशक्कत से जोता जिन खेतों को हमने
उनकी मिट्टी को फिर से हम क्षार न होने देंगे।
बड़ी तपस्या से भागीरथ लाये जो गंगा
उसकी पावनता को यूं हम नष्ट न होने देंगे
बड़े परिश्रम से हमने जो लोकतंत्र का वृक्ष लगाया
उसकी जड़ में कभी किसी को जहर न भरने देंगे
शांति-प्रेम के लिए हमेशा तत्पर हम तत्काल
किन्तु किसी हठधर्मी के आगे बन जायें काल
काम हमें करना है ऐसा जग में हो कुछ नाम
सभी अनिष्ट भावनाओं का हो जाए काम तमाम।

148 स्कूल ब्लॉक
शकर पुर, दिल्ली 92

ग्रामीण विकास में पंचायतों का योगदान

एस.आर. कमल

आजादी प्राप्त करने के उपरान्त देश के कर्णधारों का का ध्यान देश के विकास की ओर गया। परिणाम स्वरूप 1951-52 से पंचवर्षीय योजनाओं का सूत्रपात किया गया। चूंकि देश की 75% से अधिक जनता ग्रामों में निवास करती है। इसलिये ग्रामीण विकास की योजनाएं बनाई गई।

ग्रामीण विकास के अन्तर्गत ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं का समावेश किया गया। कृषि उत्पादन में वृद्धि, पशुपालन विकास, ग्रामीण लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास, कच्ची-पक्की सड़कों का निर्माण, प्रारम्भिक एवं प्रौढ़ शिक्षा प्रसार, सामजिक चेतना में जागृति, अछूत उद्धार, सहकारी समितियों का प्रसार आदि को प्राथमिकता दी गई और इनके विकास में पंचायतों को जोड़ दिया गया।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

पंचायतें प्रजातंत्र की प्रथम इकाई हैं। भारत में पंचायतों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन काल से है। सर्वप्रथम महाराजा प्रथु के शासन काल में पंचायतें बनाई गई। हिन्दू और मुस्लिम काल में ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में गांव पंचायतें सर्वोपरि महत्व रखती रही जो 'सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखाय' के सिद्धांत पर आधारित थीं। ब्रिटिश शासनकाल में पंचायतों की दशा अत्यन्त क्षीण हो गई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त पंचायतों को पुनर्जीवित किया गया। उत्तर प्रदेश में 1947 में उ.प्र. पंचायत अधिनियम पारित करके पंचायतों की स्थापना की गई।

संगठन और कार्य प्रणाली

लोकतंत्रीय विकेन्द्रित व्यवस्था के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित स्थानीय संस्थाओं को पंचायतें कहते हैं। पंचायती राज की स्थापना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र का सर्वांगीण विकास करना है जिसके तहत पंचायतें अपनी प्रमुख भूमिका निभाने में संलग्न हैं। इसके अतिरिक्त पशुधन विकास, कृषि उत्पादन में वृद्धि, ग्रामीण कार्यक्रमों में पंचायतें अपना योगदान देकर ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ करके ग्रामीण विकास के उद्देश्य को पूर्ण कर रही हैं।

इस समय देश में पंचायती राज की त्रिस्तरीय संरचना है। ग्राम स्तर पर गांव पंचायतें, ब्लाक स्तर पर क्षेत्र समितियां और जिला स्तर पर जिला परिषदें गठित हैं।

गांव सभा : किसी एक गांव या छोटे-छोटे एक से अधिक गांवों को मिलाकर एक गांव सभा गठित की जाती है।

पंचायतों द्वारा श्रमदान की कहानी भारतीय इतिहास में अद्वितीय है। हजारों मील लम्बी सड़कें स्वयं चलकर श्रमदान की कहानी कहती हैं। बहुत से पुल-पुलियां, पेयजल कूप, नाली आदि श्रमदान से बने। जनपद एटा का धुरी पुल उत्तर प्रदेश में श्रमदान का एक अद्वितीय उदाहरण है।

राष्ट्रीय, सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना की जाग्रति एवं विकास के प्रति जागरुकता उत्पन्न करने में पंचायतों का इतना योगदान है कि जनता आज अपने कर्त्तव्य व उत्तरदायित्व को समझने लगी है। बाल मंगल दल, युवक दल, महिला मण्डल और चर्चा मण्डल के रूप में स्थानीय संस्थाओं को खड़ा करने और उनमें राष्ट्रीय विकास तथा प्रजातांत्रिक भावना भरने में पंचायतों को ही श्रेय है। यदि इन संस्थाओं को प्रजातंत्र की प्रथम पाठशाला कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी।

वर्तमान विकास की योजनाओं — एककीकृत ग्राम विकास योजना, सर्वोन्मुख योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी योजना, प्रौढ़ शिक्षा पुष्टाहार कार्यक्रम, स्पेशल कम्पोनेन्ट योजना, सामाजिक वानिकी, एकीकृत बाल विकास सेवा और ट्राइसेम आदि योजनाओं में लाभार्थी के चयन करने, उनको समुचित जगह देने, स्थानीय संसाधन जुटाने, योजनाओं को प्राथमिकता के आधार पर चयन करने तथा कार्यान्वयन में अपना योगदान देने आदि कार्यों में पंचायत सक्रिय कार्य कर रही हैं।

हरित क्रांति, श्वेत क्रांति, छुआछूत विनाश क्रांति और मानव चेतना जाग्रति क्रांति आदि की सफलता में पंचायतों का ही योगदान है। पंचायत राज एक्ट लागू होने के पश्चात 36300 गांव सभाएं प्रदेश में गठित की गईं थीं।

गांव स्तर पर गांव सभा विकास का कार्य देख रही हैं। ब्लाक स्तर पर सभी गांवों के विकास का उत्तरदायित्व क्षेत्र

समिति पर है और जिला स्तर पर जिले के सभी गांवों का विकास व प्रशासन का उत्तरदायित्व जिला परिषद् पर है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में

भारत में नियोजन के प्रारंभ होते ही पंचायतें विकास के कार्यक्रम में जुड़ी हुई हैं और वर्तमान में इनके उत्तरदायित्व में उत्तरोत्तर वृद्धि होती आ रही है। 1971-72 तक देश की ग्रामीण जनसंख्या का लगभग 98% भाग गांव पंचायतों में अन्तर्गमन हो गया था और आज पंचायतों की संख्या बढ़कर लगभग 2.75 लाख तक पहुंच गई है। वर्तमान स्थिति के अनुसार देश में मेघालय, नगालैण्ड, मिजोरम, पाण्डीचेरी और लक्षद्वीप को छोड़कर अन्य सभी राज्यों में पंचायतें प्रभावशाली स्तर पर स्थित हैं।

सरकार देश की लोकतंत्रात्मक व्यवस्था में गांव स्तर से संसद तक प्रत्येक स्तर पर जनता की भागीदारी चाहती है और पंचायती राज संस्थाओं को सबसे अधिक महत्वशाली माध्यम मानती है। इसी दृष्टिकोण से 1981-82 से विकेन्द्रीकरण प्रणाली की स्थापना की गई है जिसका मूल मंत्र है – "योजनायें ऊपर से न बनकर नीचे से बनें।"

पंचायती राज की वर्तमान स्थिति से स्पष्ट है कि गांवों के सर्वांगीण विकास में पंचायतों का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। योजनाओं के प्रारम्भ में पंचायतों ने स्कूल भवन, चिकित्सालय, पशु चिकित्सालय, शिशु कल्याण केन्द्र, सामुदायिक केन्द्र और औषधालय आदि के निर्माण हेतु केवल अपनी भूमि ही दान में नहीं दी अपितु अपने सीमित फण्ड से धन व जनता से दान एकत्रित करके इन भवनों के निर्माण में सक्रिय योगदान दिया है और आज भी संलग्न हैं।

कमियां एवं सुझाव

इतना होते हुए भी आज पंचायतों के मार्ग में कुछ बाधायें हैं जिनके कारण वे सफलता पूर्वक कार्य करने में सक्षम नहीं हो रही हैं।

1. दलबंदी : आज गांवों में दलबन्दी अधिक है जिसके कारण छोटे-छोटे झगड़े होते रहते हैं और जन कल्याण की योजनाओं के प्रति सही निर्णय नहीं ले पाती हैं। अतः इस दूषित भावना को त्याग कर राष्ट्रहित की भावना को ग्रहण करना होगा।

2. अशिक्षा : निरक्षरता व्यक्ति के विकास और ग्रामीण विकास में महान रोड़ा है। अतः प्रौढ़ शिक्षा का लाभ उठाकर "एक शिक्षित व्यक्ति एक अनपढ़ व्यक्ति को पढ़ाने का संकल्प करे" तो यह निरक्षरता का कलंक शीघ्र दूर हो सकता है।

3. धन की कमी : पंचायतों के पास धन की कमी है जिसके कारण गांव का सुधार करने में असमर्थता रहती है। पंचायतें गांव सभा की भूमि पर सामाजिक वानिकी करें तथा अन्य स्रोतों से भी आय बढ़ाने का प्रयास करें। शासन की ओर से भी अनुदान के रूप में धन प्राप्त हो।

4. जाति भेद-वर्ग भेद : जातिवाद और वर्गवाद के कारण पंचायतें सर्वमान्य हित को नहीं देख पाती। इस दूषित भावना से ऊपर उठकर कार्य करने का प्रयास करना चाहिए।

5. कुशल नेतृत्व की कमी : कुशल नेतृत्व के अभाव के कारण पंचायतें जनता का विश्वास और श्रद्धा अर्जित करने में असमर्थ रहती हैं। इसके लिए शिक्षा और प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

6. पंचायत उद्योग : पंचायत उद्योग भी सक्रिय रूप से सभी जगह कार्य नहीं कर रहे हैं। अतः पंचायत उद्योग की अधिक से अधिक स्थापना की जाय ताकि ग्रामीण क्षेत्र में उद्योगों का प्रसार एवं प्रशिक्षण हो और रोजगार का सृजन हो। साथ ही पंचायत की आय में वृद्धि हो।

7. मतभेद : पारस्परिक मतभेद वैमनस्यता को जन्म देते हैं। अतः पंचायत में पारस्परिक मतभेदों को भुलाकर जनकल्याण की भावना से कार्य करना चाहिए।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि ग्रामीण विकास में पंचायतों का विशेष स्थान है। यदि उपरोक्त दूषित भावनाओं को त्याग कर देश कल्याण की भावना से पंचायतें कार्य करें तो वास्तव में पंचायतों के द्वारा 'रामराज्य का सपना' साकार हो सकता है।

प्रसार प्रशिक्षण अधिकारी
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र
मैनपुरी (उ.प्र.)

आदिवासी महिलाओं का बदलता परिवेश

प्रभात कुमार सिंघल

उनके सामने भी आज परिवार का बोझ उठाने की जिम्मेवारी है। उनके कदम भी घर से बाहर निकल पड़े हैं। पुरुषों के कंधे से कन्धा मिलाकर वह गृहस्थी का भार उठाने में सहायक बन रही हैं। अनेक अवसर उनकी स्थिति को बेहतर बनाने के लिए इन्द्रधनुषी छटा लिए खड़े हैं। सरकार भी उनको आगे लाने के लिए अनेक उपाय कर रही है।

यह बात हम यहां उन शहरी महिलाओं की नहीं कर रहे हैं जो पढ़-लिखकर प्रशासन के किसी ऊंचे ओहदे पर हैं, अथवा अन्यत्र नियुक्त हैं। यह बात उन ग्रामीण आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में है जिनके अंधेरे जीवन में उजाले की किरण चमकी है। भारतवर्ष में आदिवासी समाज के मध्य यदि हम राजस्थान के आदिवासियों विशेषकर आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में देखें तो हम पायेंगे कि उनके आर्थिक उत्थान के लिए किये गये प्रयत्नों का सुफल सामने आने लगा है। अपनी समाज की स्थिति के प्रति उनकी जागरुकता भी बढ़ने लगी है। विकास के कामों में उनकी राय ली जा रही है। कार्यक्रमों का सीधे रूप में उनसे संबंध है। उनकी कूप-मंडूकता भी दूर होने लगी है। उनकी स्थिति सुधारने के लिए राष्ट्रीय सम्मेलनों में विचार-विमर्श किया जाने लगा है।

साक्षरता

जहां तक आदिवासी महिलाओं को साक्षर करने का प्रश्न है इसमें सबसे बड़ी बाधा उनकी स्वयं की जागरुकता है। यही कारण है कि महिला साक्षरता में आशानुकूल वृद्धि नहीं हो सकी है। कन्या शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए कन्या आश्रम विद्यालय खोले गये। बच्चों को अधिक दूर न जाना पड़े अतः अधिक से अधिक प्राथमिक शालायें चलाई जा रही हैं। वर्तमान में औसतन पौने दो गांवों पर एक शिक्षा की एक इकाई जनजाति क्षेत्र में स्थापित है जो त्वरित प्रयासों का सबल पक्ष है। वर्ष 1983-84 में जनजाति उपयोजना क्षेत्र में वर्ष 6 से 11 एवं 11 से 14 आयु वर्ग की बालिकाओं का नामांकन क्रमशः 30.40 एवं 10.19 प्रतिशत रहा है। प्राथमिक स्तर तक निःशुल्क शिक्षा के साथ-साथ पोशाकें, स्टेशनरी व किताबें निःशुल्क उपलब्ध कराई जाती हैं, प्रौढ़ महिलाओं के लिए रात्रि में प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र चलाए जाते हैं।

शिक्षा के प्रति महिलाओं में रूझान बढ़े तथा वह अपनी लड़कियों को शाला भेजें इसके लिए जन-जागृति की आवश्यकता समझी गई तथा इस वर्ष से आदिवासी महिलाओं के लिए चेतना शिविरों की शुरूआत की गई है।

जीवन में बदलाव, रेशम से साड़ी बुनते हुये थावरी

आंगनवाड़ी केन्द्र

ऐसा नहीं कि पूर्व के प्रयासों का सुफल सामने न आया हो। अनेक आदिवासी लड़कियों ने पढ़ लिख कर आंगनबाड़ी चलाने का काम हाथ में लिया है। आदिवासी महिलायें सफलतापूर्वक आंगनबाड़ी केन्द्र चला रही हैं। कोटड़ा तहसील के सड़ा गांव में नौवीं कक्षा पास रजवन्ती आंगनबाड़ी केन्द्र का संचालन करने के साथ-साथ बच्चों एवं गर्भवती माताओं के स्वास्थ्य का भी ध्यान रखती है। आदिवासी महिलायें देश के विकास में किसप्रकार भागीदार बन सकती हैं यह पूछने पर वह बताती है, "आदिवासी महिलाएं भी विकास की महत्वपूर्ण कड़ी हैं, कहीं सड़क बने, पुल या भवन बने आदिवासी महिलाएं काम करती नजर आती हैं। उनको यह मालूम होता है कि वह पेट भरने के लिए मजदूरी कर रही हैं पर यह मालूम नहीं होता कि वह देश के निर्माण एवं विकास में योगदान कर रही हैं। हमारी भूमिका खेती में भी बराबर की है। अब अगर महिलाएं जागृत हो जाएं, अपनी महत्वपूर्ण स्थिति समझने लगें तो क्या वह सरकार के कार्यक्रमों व योजनाओं का पूरा लाभ लेने के लिए उन्हें सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा सकती हैं?" रजवन्ती की सखी भूराग्राम की हंसा, बुडिया ग्राम की गुजरी तथा कोलिया ग्राम की मोहनी भी इसके साथ पढ़ी-लिखी हैं तथा सफलतापूर्वक आंगनवाड़ी केन्द्र चला रही हैं।

महिला स्वास्थ्य

अपने स्वास्थ्य के प्रति भी आदिवासी महिलाएं जागृत हुई हैं। एक समय था जब एक परिवार में औसतन पांच बच्चों से ज्यादा होते थे। आर्थिक साधनों के अभाव होते हुए भी बड़ा परिवार एक सामान्य बात थी। राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रमों के प्रचार-प्रसार से उनकी मानसिकता बदलने लगी है। छोटे परिवार के लाभों की जानकारी से वे परिचित होने लगी हैं।

गांव-गांव और ढाणियों में आदिवासी महिलाएं परिवार नियोजन के लिए आगे आने लगी हैं। जनजाति महिलाओं को जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग निर्धारित राजकीय प्रोत्साहन राशि के अतिरिक्त 150/- रु. प्रोत्साहन राशि सुलभ कराता है। बांसवाड़ा, डूंगरपुर, सिरोही, चित्तौड़गढ़ व उदयपुर जिलों के आदिवासियों के दस हजार आदिवासी महिलाओं को इस वर्ष परिवार नियोजन अपनाने पर प्रोत्साहन राशि देने के लिए 15 लाख रुपये का प्रावधान किया गया है। प्रथम बार 200 आदिवासी महिलाओं को दाइयों का प्रशिक्षण देने का भी कार्यक्रम बनाया गया है। एस.टी.सी.. एवं नर्स के प्रशिक्षण की सुविधा का लाभ भी आदिवासी महिलाएं उठाने लगी हैं।

आर्थिक उत्थान के अवसर

आदिवासी महिलाओं को घर बैठे रोजगार उपलब्ध कराने के लिए भी प्रयास किए गये। रेशम कीट पालन एवं बांस के विविध प्रकार के उपकरण तैयार करने के नये आर्थिक कार्यक्रमों का लाभ आदिवासी महिलाएं उठाने लगी हैं। आदिवासी महिलाएं आज रेशम कीट पालन कर अपनी आय बढ़ा रही हैं। रेशम कोयों से धागा निकालने के काम से आदिवासी महिलाएं आगे आई हैं। राजूबाई, नारायणी, सुशीला, गंगाबाई, भंवरी बाई आदि 50 महिलाएं रेशम धागा निकालने में प्रशिक्षित हो चुकी हैं।

आदिवासी महिला नानूड़ी, वरधी, गंगू, नीलगी, सकूड़ी, देवली, थावरी आदि करीब 500 महिलाओं ने बांस के उपकरण बनाने में प्रशिक्षण लिया है। बांस उपकरण बनाने के बदले उन्हें 80 हजार रुपये का भुगतान मजदूरी के रूप में दिया गया है। वन उपज बेचकर गुजारा करने वाली आदिवासी महिला राजूरी बाई ने बांस को बेचने की जगह उपकरण बनाना अधिक लाभकारी समझा। रेशम कीट पालन तथा बांस उपकरण बनाने से उसे प्रति वर्ष छह हजार रुपये का अतिरिक्त आर्थिक लाभ होने लगा है। इस वर्ष एक लाख बीस हजार रुपये के बांस उपकरण बनाने का काम किया जा रहा है। पई, अलसीगढ़ एवं माकड़ादेव गांवों में आदिवासी महिला सहकारी उत्पादक समितियों का गठन किया गया है।

पाराखेत की रहनेवाली रमली ने बताया कि मैं पांचवीं बार रेशम कीड़े पाल रही हूं। हमें 35 रुपया एक किलोग्राम ककून का मिलता है। गत वर्ष 1500 रुपये मिले थे। तीन बीघा जमीन की आधा बीघा भूमि पर शहतूत की खेती की है। यह शहतूत की पत्तियां बारे में से निकाल कर ट्रे में डाल रही थी। यहीं पर ढल्ला ने बताया कि उसकी पत्नी किसनी खेत पर शहतूत की पत्तियां लेने गई हैं। पन्नी बाई ने बताया यह समय हमारे लिए सबसे ज्यादा व्यस्तता का होता है। हर दो घंटे में कीड़े पत्तियां खा लेते हैं। गत वर्ष रेशम कीट पालन कार्य से इन्हें लगभग एक हजार रुपये मिले थे। थावरी एवं भंवरी भी यहां रेशम के कीड़े पाल रही थी। इस

बार रमली ने 27 किलो ककून उत्पन्न कर 946 रु. तथा किसनी ने 822 रुपये प्राप्त किये।

रेशम कीट पालन कार्य से ही सीसारमा गांव की राजूबाई रेशम धागा निकाल कर प्रतिदिन दस रुपये प्राप्त कर रही है। गोरण गांव की थावरी ने रेशम कीट पाल कर चार हजार रुपये अतिरिक्त वार्षिक आय प्राप्त की है।

जनजागृति

आदिवासी महिलाएं योजनाओं का लाभ लेने के लिए आगे आई हैं। परंतु अभी ऐसी महिलाओं की संख्या जनजाति क्षेत्र की तुलना में काफी कम है। शेष महिलाओं को भी विकास कार्यक्रमों का लाभ मिल सके तथा वह भी अपनी स्थिति को समझ सकें इसके लिए सातवीं पंचवर्षीय योजना में चेतना शिविरों का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम बनाया गया है। विभिन्न संस्थाओं के सहयोग से आदिवासी महिलाओं के लिए जन-चेतना शिविरों के आयोजन प्रारंभ कर दिये गये हैं। कोटड़ा एवं ढीकली गांव में आयोजित चेतना शिविर में आदिवासी महिलाओं ने रुचि प्रकट की। ढीकली शिविर में आई महिलाओं को क्षेत्रीय भ्रमण के माध्यम से भी कार्यक्रमों को समझाया गया।

इन शिविरों का प्रमुख उद्देश्य उनकी समस्याओं को समझने के साथ-साथ उनके लिए चलाये जा रहे शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आर्थिक उत्थान के महत्वपूर्ण कार्यक्रमों की जानकारी देना है जिससे उनमें उनके प्रति रूझान उत्पन्न हो और वे उसका लाभ लेने के लिए चेतन बनें।

उनसे उनकी राय मालूम की जाती हैं। वे क्या चाहती हैं? कैसे कार्यक्रमों में उनकी रुचि है? आदि। हाल ही में डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा में नारू रोग के प्रति चलाये गये जन शिक्षण अभियान में एक सौ ग्राम संपर्क दलों का गठन किया गया, जिसमें प्रत्येक दल में दो महिलाओं को भी सदस्य बनाया गया। संपर्क के दौरान आदिवासी महिलाओं से हैण्डपम्प किस जगह लगाया जाये उनकी राय पूछी गई। क्योंकि पीने का पानी घरों में महिलाएं ही लाती हैं। पानी को छानकर पीने के लिए जनमत तैयार किया गया ताकि नारू रोग से बचा जा सके।

आदिवासी महिलाओं की समस्याओं एवं विकास के प्रति सरकार पूरी तरह प्रयत्नशील है, उनकी समस्याएं क्या हैं? तथा उनके लिए सरकार, स्वयं सेवी संस्थाएं तथा अन्य संस्थाएं क्या कर रही हैं? तथा और क्या किया जा सकता है? इसके लिए राष्ट्रीय स्तर का तीन दिवसीय सम्मेलन उदयपुर में इसी वर्ष जुलाई में आयोजित किया गया। सम्मेलन के दौरान ही संभागियों ने सीसारमा गांव में आयोजित जाजम बैठक में आदिवासी महिलाओं से खुलकर चर्चा की। सम्मेलन की संयोजिका स्वयं एक महिला व्याख्याता श्रीमती अनिता थीं।

सम्मेलन में जो प्रमुखबिन्दु उभरकर सामने आये उनमें प्रमुखतः आदिवासी महिलाओं में साक्षरता की अधिक न्यूनता के कारण सरकारी कार्यक्रमों के अनुरूप विकास की गति धीमी रही है। जंगलों के समाप्त होने से आदिवासी महिलाओं को पारिवारिक जिम्मेदारी के अलावा घर के बाहर आर्थिक मोर्च पर भी दायित्व वहन करना पड़ रहा है जिससे उसकी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आया है। सरकार एवं स्वयं सेवी संस्थाएं इनके उत्थान के लिए बहुत कुछ कर रही हैं। परन्तु व्यावहारिक स्तर पर अभी भी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। सरकारी योजनाओं में आदिवासियों की परंपरा में उनके भौतिक सोच एवं चिंतन को विशेष रूप से ध्यान रखा जाना चाहिये।

सार रूप में कहा जा सकता है कि जनचेतना का अभाव एवं उनकी संस्कृति आदिवासी महिलाओं के विकास में प्रमुखतः बाधक रहे हैं। अब सरकार चेतना शिविरों के माध्यम से इन बाधाओं को दूर करने के लिए कटिबद्ध है। प्रयासों का परिणाम भी सामने आया है। शनैः-शनैः लड़कियां शाला तक पहुंचने लगी हैं। परिवार नियोजन अपना कर सीमित परिवार रखने तथा अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरुक बन रही हैं। सदियों से नारू जैसी बीमारी से पीड़ित आदिवासी महिलाएं इससे बचने के लिए पानी छानकर पीने लगी हैं। वन उपज संग्रह एवं खेती के अपने परंपरागत आय के स्रोतों से ऊपर उठकर रेशम कीट पालन, बांस के उपकरण एवं दरी-निवार बुनने के कार्यक्रम अपना कर अपनी आय का माध्यम बना रही हैं। उनकी समस्याएं हल करने एवं उनके उत्थान के लिए विविध कार्यक्रमों के रूप में एक इन्द्रधनुष उनके सामने खींचा है। कार्यक्रम रूपी इन्द्रधनुष से उनके जीवन में कितना रंग निखर सकेगा यह इस बात पर ज्यादा निर्भर करता है कि स्वयं आदिवासी महिलाएं कितनी जागरुक बन पाती हैं।

के.आर. 247,
सिविल लाइन्स
कोटा (राजस्थान)324001

त्रिवेन्द्रम (केरल) में मछली बाजार

मध्य प्रदेश में खण्डुवा
के अन्तर्गत स

महाराष्ट्र के थाणे जिले में गांव उत्तन में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत मछली पकड़ते हुए लोग।

मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले के गांव गुलाब में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाया गया मछली तालाब।

ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम
ानिकी नर्सरी।

उत्तर प्रदेश के देहरादून जिले के गांव क्यार कुल्ली में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत सिंचाई सुविधाएं।

सिंचाई सुविधाओं का विस्तार और सुधार

सुभाष चन्द्र "सत्य"

देश की चंहुमुखी प्रगति की कुंजी है कृषि उत्पादन में वृद्धि। यही कारण है कि स्वतंत्रता के पश्चात् देश में खेती की पैदावार बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया है। इस उद्देश्य की प्रगति के लिए भूमि सुधारों, खेती की आधुनिक तकनीकें अपनाने तथा उन्नत बीज व उर्वरक के इस्तेमाल पर बल दिया गया है। किंतु कृषि का सबसे अधिक महत्वपूर्ण पहलू है सिंचाई। आजादी के समय हमारे देश में सिंचाई की सुविधाएं नाम मात्र की थीं। 1951 से पहले सिंचाई के सभी साधनों से केवल 2 करोड़ 21 लाख हैक्टेयर जमीन के लिए पानी उपलब्ध था। इसमें विभिन्न परियोजनाओं से सिंचाई केवल 97 लाख हैक्टेयर में होती थी। शेष सारी कृषि भूमि में खेती करने वाले किसानों का भाग्य वर्षा की कृपा पर निर्भर था। इसी चिंतनीय स्थिति को देखते हुए योजनाबद्ध विकास के प्रथम चरण से ही सिंचाई सुविधाओं के विस्तार के कार्यक्रम शुरु कर दिए गए, ताकि वर्षा पर निर्भरता क्रमशः घटती जाए। किंतु अब भी देश में 10 करोड़ हैक्टेयर से अधिक कृषि भूमि सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर है। संभवतः इसी कारण हमारे यहां प्रति हैक्टेयर उत्पादकता काफी कम है।

सिंचाई क्षमता बढ़ाना आवश्यक

जाहिर है कि पैदावार में वृद्धि के लिए सिंचाई साधनों का विस्तार करके देश में, विशेषकर वर्षा सिंचित इलाकों में सिंचाई क्षमता बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए 20 सूत्री कार्यक्रम में नई सिंचाई सुविधाएं जुटाने तथा वर्तमान क्षमता के बेहतर इस्तेमाल को प्रमुखता दी गई है। बीस सूत्री कार्यक्रम 1986 के तीसरे सूत्र में संकल्प प्रकट किया गया है कि हम :

"जल ग्रहण क्षेत्रों का विकास और नदी घाटियों तथा डेल्टाओं में जल निकासी के साधनों को उन्नत बनाएंगे;

- सिंचित क्षेत्रों में सिंचाई प्रबंध सुधारेंगे;
- जिन स्थानों में पानी जमा हो जाता है या ज़मीन ज्यादा खारी हो जाती है, उसे रोकेंगे और पानी को व्यर्थ नहीं जाने देंगे, और
- नदियों, कुओं आदि के जल के उपयोग का संयोजन करेंगे।"

यह सूत्र इस बात का परिचायक है कि केंद्र सरकार अब सिंचाई सुविधाएं जुटाने के काम को पहले से अधिक महत्व देने लगी है। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि सिंचाई को अब कृषि मंत्रालय से अलग करके जल संसाधन मंत्रालय नाम से नया मंत्रालय बना दिया गया है। सातवीं योजना में एक करोड़ 30 लाख हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई सुविधाएं जुटाने का लक्ष्य रखा गया है। योजना में सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण कार्यों के लिए एक खरब 69 अरब रुपये का प्रावधान है जो छठी योजना की राशि से लगभग डेढ़ गुना है। छठी योजना में भी कृषि के लिए जितना धन रखा गया उसमें से आधी राशि सिंचाई के लिए निर्धारित थी। उल्लेखनीय बात यह है कि छठी योजना का खर्च पांचवीं योजना के परिव्यय से 186 प्रतिशत अधिक था। छठी योजना में यह भी निर्णय किया गया कि लघु सिंचाई और कमान क्षेत्र विकास को कृषि क्षेत्र से निकाल कर सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण क्षेत्र में शामिल कर दिया जाए। इस प्रकार इन आंकड़ों से ज्ञात होता है कि सिंचाई के लिए योजना खर्च में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई है। इन प्रयासों को और गति देने तथा जल संसाधनों के समन्वित विकास को संभव बनाने के लिए सरकार जल्दी ही राष्ट्रीय जल नीति घोषित करेगी। राष्ट्रीय जलनीति का मसौदा तैयार हो चुका है और जल संसाधनों की राष्ट्रीय परिषद में विचार के बाद इसे अंतिम रूप दे दिया जाएगा। इसमें उल्लेखनीय बात यह है कि यह मसौदा सम्बद्ध क्षेत्रों के विशेषज्ञों और संस्थानों से विस्तृत विचार विमर्श के बाद तैयार किया गया है। इस प्रकार राष्ट्रीय जल नीति निर्धारित हो जाने से निश्चय ही सिंचाई के साधनों, जल आपूर्ति तथा बाढ़ नियंत्रण उपायों के विकास के साथ-साथ जल संसाधनों के बेहतर इस्तेमाल में भी काफी मदद मिलेगी।

सिंचाई परियोजनाएं

सिंचाई की व्यवस्था में तेजी से विस्तार करने के उद्देश्य से योजनाबद्ध विकास की प्रक्रिया प्रारंभ होने के साथ ही सिंचाई की बड़ी और मझोली परियोजनाएं हाथ में ली गईं। इनमें बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनाओं को प्रमुखता दी गई। ये परियोजनाएं केवल सिंचाई की अतिरिक्त व्यवस्था की दृष्टि से ही नहीं बल्कि अन्य दृष्टियों से भी महत्वपूर्ण हैं। नदी घाटी

परियोजनाओं से नदियों के जल के बेहतर इस्तेमाल से बाढ़ की संभावना को कम किया जा सकता है और पानी की कमी वाले मौसम के लिए पानी जमा किया जा सकता है। इनका एक और उल्लेखनीय पहलू यह है कि इन परियोजनाओं से बिजली तैयार होती है जो केवल कृषि कार्यों के लिए ही नहीं बल्कि उद्योगों तथा विकास के अन्य क्षेत्रों के लिए भी अत्यंत उपयोगी है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने देश में उपलब्ध विपुल नदी जल का सम्यक उपयोग करने के उद्देश्य से अनेक नदीघाटी परियोजनाएं स्थापित की हैं, जिनसे बड़े पैमाने पर बिजली और सिंचाई जल उपलब्ध हुआ है। 1951 के बाद से लगभग 1200 बड़ी और मझोली सिंचाई परियोजनाएं शुरू की जा चुकी हैं। अनेक छोटी सिंचाई योजनाएं भी हाथ में ली गई हैं। इनमें भाखड़ा बांध परियोजना तो बहुत पहले ही पूरी हो गई थी। उसके अतिरिक्त आंध्र प्रदेश में नागार्जुन सागर परियोजना, बिहार में कोसी परियोजना, गुजरात में साबरमती जलाशय परियोजना, कर्नाटक में घटप्रभा घाटी परियोजना, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान की चंबल परियोजना, उड़ीसा की हीरा कुण्ड परियोजना, महाराष्ट्र में कृष्णा परियोजना, उत्तर प्रदेश की टिहरी बांध परियोजना तथा राजस्थान नहर परियोजना जिसका नया नाम इंदिरा गांधी नहर परियोजना रखा गया है, उल्लेखनीय हैं। इंदिरा गांधी नहर परियोजना का दूसरा चरण हाल ही में पूरा हुआ है।

इन परियोजनाओं के साथ-साथ अन्य लघु योजनाएं चलाने तथा सिंचाई के परंपरागत साधनों में सुधार से 1951 की तुलना में सिंचाई क्षमता में तीन गुना वृद्धि हो गयी है। अब देश में लगभग 7 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई की सुविधायें हो गयी हैं। सिंचाई की आधुनिक व्यवस्था करने में सहयोग के लिये सरकार ने सोवियत संघ, हंगरी आदि कुछ देशों से भी समझौते किये हैं। इन देशों ने सिंचाई परियोजनाओं के लिये तकनीकी और आर्थिक सहायता दी है।

जल संरक्षण

सिंचाई साधनों के विकास के साथ-साथ भू तथा जल संरक्षण के उपाय करना भी आवश्यक है। इनमें नमी की स्थिति सुधारने के लिये नाले बंद करना, खेतों में जोहड़ बनाना, भूमि के कटाव पर नियंत्रण तथा उपयुक्त स्थानों पर पानी के उपयोग की व्यवस्था शामिल है।

नदी घाटी योजनाओं के जल ग्रहण क्षेत्रों में जल विभाजक बनाने के काम में और तेजी लाई जा रही है। तीसरी योजना अवधि में ही इस तरह की एक विस्तृत योजना प्रारंभ कर दी गयी थी। इसके अंतर्गत नीचे जमा हो जाने वाली मिट्टी को साफ कर दिया जाता है जिससे जलाशयों में पानी अधिक समय तक जमा रह सकता है। इसके अलावा गंगा के थाले में भी जल ग्रहण क्षेत्रों में समन्वित जल विभाजक प्रबंध की एक केंद्र प्रायोजित योजना चलाई गयी। इसका उद्देश्य वर्षा के पानी को ग्रहण करने, भूमि कटाव रोकने तथा पानी के बहाव में कीचड़ कम करने के लिये जल ग्रहण क्षेत्रों की क्षमता बढ़ाना है। यह योजना ऊपरी यमुना, साहिबी, ऊपरी गंगा, गोमती, पुनपुन, अजय, सोन तथा रुपनारायण नदियों के क्षेत्रों में चल रही है।

इसके अलावा लवण युक्त भूमि को उपजाऊ बनाने की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। देश में लगभग 70 लाख हैक्टेयर भूमि खारी या कल्लर है। इसका अधिकतर क्षेत्र पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में है। इस संबंध में विचित्र बात यह है कि जैसे-जैसे सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि हो रही है कल्लर भूमि का क्षेत्र भी बढ़ता जा रहा है। इस स्थिति पर अंकुश लगाने के लिये कल्लर भूमि को उपजाऊ बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं। हरियाणा में करनाल जिले में केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान इस दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है। संस्थान के वैज्ञानिकों ने ऐसी विधि विकसित कर ली है जिससे कल्लर भूमि से अच्छी पैदावार ली जा सकती है। 5 वर्ष तक इस विधि के अनुसार खेती करने से भूमि स्थायी रूप से उपजाऊ बन जाती है। यह संस्थान देश भर के किसानों तक यह तकनीक पहुंचा रहा है।

सिंचाई व्यवस्था में सुधार

सिंचाई के साधनों के विस्तार और सुधार तथा इन कामों में तालमेल कायम करने के लिये सरकार ने कई संस्थान बनाये हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण संगठन है केंद्रीय जल आयोग, जो राज्य सरकारों की सलाह से देश के जल संसाधनों की समग्र रूप से देखरेख करता है। इसी तरह की एक संस्था राष्ट्रीय जल विकास अभिकरण है। यह संगठन केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय द्वारा तैयार की गयी नीति को लागू करता है। यह संस्थान राज्यों के सहयोग से विभिन्न जलाशयों तथा संपर्क नहरों के निर्माण के लिये सर्वेक्षण आदि करती है तथा इन परियोजनाओं की व्यावहारिकता रिपोर्ट तैयार करती है। इसके अतिरिक्त केंद्रीय भूजल बोर्ड तथा कमान क्षेत्र विकास प्रभाग

भी सिंचाई की सुविधाओं में सुधार करने के उद्देश्य से विभिन्न योजनायें चलाते हैं। लघु सिंचाई के कार्यक्रमों की देख रेख के लिये भी अलग प्रभाग है। सिंचाई सुविधाओं का विस्तार तथा उनमें सुधार तभी संभव है जब नयी-नयी तकनीकों और विधियों को विकसित करने तथा अपनाने का क्रम निरंतर चलता रहे। यही कारण है कि सिंचाई और जल संरक्षण के क्षेत्र में अनुसंधान पर भी पर्याप्त बल दिया गया है। इस उद्देश्य से देश के विभिन्न भागों में कई केंद्र और प्रतिष्ठान बनाये गये हैं। केंद्रीय सिंचाई और विद्युत बोर्ड स्वतंत्रता से पहले से ही सक्रिय है। यह देश के विभिन्न केंद्रों में स्थित अनुसंधान केंद्रों में तालमेल रखता है और विदेशों में हुए अनुसंधान परिणामों की जानकारी सम्बद्ध संस्थाओं, राज्यों तथा विभागों को उपलब्ध कराता है। पुणे के निकट खड़गवासला में केंद्रीय जल एवं विद्युत अनुसंधान केंद्र दक्षिण एशिया का प्रमुख अनुसंधान केंद्र है। इस केंद्र में जल संसाधनों के विकास के संबंध में गहन अनुसंधान और अध्ययन होता है।

जल संसाधनों के विकास की परियोजनायें तैयार करने तथा उन्हें क्रियान्वित करने की विधियों में सुधार लाने के बारे में अध्ययन करने के लिये 1978 में रुड़की में राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान बनाया गया। यह संस्था भी जल संसाधनों के उपयोग में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

उपलब्ध साधनों का बेहतर उपयोग

इसमें कोई संदेह नहीं कि देश में सिंचाई परियोजनाओं का जाल बिछ जाने तथा अनेक चालू और निर्माणाधीन परियोजनाओं के संभावित परिणामों को ध्यान में रखते हुए सिंचाई सुविधाओं का सुखद चित्र हमारे सामने उभरता है। किंतु दुर्भाग्यवश हमारी परियोजनायें अपेक्षित और निर्धारित लक्ष्य से कम परिणाम दे रही हैं। निर्धारित क्षमता के पूर्ण उपयोग मे लक्ष्य से अभी हम बहुत दूर हैं। इसलिये बीस सूत्री कार्यक्रम 1986 और सातवीं योजना में नयी सुविधाओं पर धन और शक्ति लगाने की बजाय वर्तमान साधनों तथा परियोजनाओं में सुधार और उनके बेहतर उपयोग के उपाय करने पर बल दिया गया है। इनमें बड़ी योजनाओं के प्रबंध को बेहतर बनाना, भू जल साधनों और कमान क्षेत्रों का विकास, जलग्रहण क्षेत्रों में जल विभाजक बनाना तथा जमीन की नमी के संरक्षण के उपाय शामिल हैं। सातवीं योजना में जहां एक करोड़ तीस लाख हैक्टेयर भूमि में सिंचाई नये साधन जुटाने का लक्ष्य है, वहां सिंचाई व्यवस्था में सुधार और बेहतर इस्तेमाल के माध्यम से एक करोड़ दस लाख हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई सुलभ कराने का संकल्प भी प्रकट किया गया है। संभवतः इसी उद्देश्य को सामने रख कर सातवीं योजना में सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण के लिये कृषि क्षेत्र से भी अधिक धन का प्रावधान किया गया है।

इस संदर्भ में एक और चिंतनीय पहलू यह है कि हमारी सिंचाई परियोजनायें निर्धारित समय में पूरी नहीं हो पातीं। 1951 के बाद करीब 1200 सिंचाई परियोजनायें प्रारंभ हुईं जिनमें से आधी से अधिक अभी तक पूरी नहीं हो पायी हैं, यद्यपि उनसे आंशिक लाभ मिलने लगे हैं। जो परियोजनायें पूरी हो भी चुकी हैं उनमें से बहुत कम निर्धारित समय पर पूरी हुईं। योजनायें शुरु तो बड़ी-बड़ी आशाओं के साथ होती है किंतु उनमें विभिन्न कारणों से विलम्ब होते रहने से लागत भी कई गुना बढ़ जाती है और उनके पूरा होने तक आवश्यकताओं का स्वरुप भी बदल जाता है। इंदिरा गांधी नहर परियोजना इस निराशाजनक स्थिति का ज्वलंत उदाहरण है। 1958 में शुरु हुई यह परियोजना लगभग 28 वर्ष बाद जाकर पूरी हुई है। इस बीच इसकी लागत में कई गुना वृद्धि हो गयी है।

पिछले दिनों प्रधान मंत्री ने केंद्रीय सिंचाई तथा बिजली बोर्ड के हीरक जयंती समारोह का उद्घाटन करते हुए इस त्रुटि की ओर संकेत करते हुए कहा कि "परियोजओं का निर्धारित समय और निर्धारित लागत में पूरा न होना एक गंभीर समस्या है और हमें वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षमताओं का उपयोग करके इस समस्या को हल करना होगा।" उन्होंने आगे कहा—"जब भी हम किसी योजना को हाथ में लें तो आरंभ से अंत तक उसके सभी छोटे-बड़े पहलुओं पर हमारी नजर पहले से ही रहनी चाहिये और संभावित परिस्थितियों का अनुमान लगा कर ही पूरी योजना की रूप रेखा तैयार करनी चाहिये।"

इस प्रकार राष्ट्रीय विकास में सिंचाई के महत्व को देखते हुए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि परियोजनायें समय पर पूरी हों और उनके पूरे लाभ देश के किसानों को मिलें। सिंचाई की पर्याप्त सुविधायें होने और उनके पूर्ण उपयोग से जहां कृषि उत्पादन में वृद्धि होगी, वहां अधिक मात्रा में बिजली बनने से अन्य क्षेत्रों में भी देश दिन दुगनी रात चौगुनी उन्नति करेगा तथा गरीबी दूर करके राष्ट्र को समृद्धि की राह पर ले जाने का हमारा सपना पूरा हो सकेगा।

सी 7/134 ए, केशवपुरम (लारेंस रोड)
दिल्ली-110035

पर्यावरण :

प्रदूषण और इसका निवारण

नरेन्द्र सिंह

उदार प्रकृति ने हमें स्वच्छ जल, शुद्ध हवा और स्वच्छ वातावरण प्रदान किया। पर मनुष्य ने अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने की कोशिश में और बाद में भौतिक प्रगति और विकास की दौड़ में एक दूसरे से आगे निकलने की अदम्य इच्छा के वशीभूत होकर प्राकृतिक संसाधनों का इतना अधिक दोहन कर डाला कि पर्यावरण का नाजुक संतुलन ही गड़बड़ा गया है। यदि समय रहते पर्यावरण के प्रदूषण की रोकथाम के लिए समुचित उपाय नहीं किए गए तो विकास की ये निर्बाध गतिविधियां ही मनुष्य और अन्य प्राणियों के विनाश का कारण भी बन सकती हैं।

आज एक बड़ी ही विषम स्थिति है। अब यह स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि मनुष्य को अपना विकास या प्रदूषण रहित पर्यावरण में से एक का चुनाव करना होगा। लेकिन आज के युग में ये दोनों ही मनुष्य के लिए बहुत जरूरी हैं। विकास की गति पर ही मनुष्य जाति का अस्तित्व टिका है। और यही बात प्रदूषण रहित पर्यावरण के बारे में कही जा सकती है। कुछ गतिविधियों के कारण जब पर्यावरण की अस्थाई तौर पर क्षति होती है तो कुछ समय में प्रकृति इस नुकसान को पूरा कर लेती है। लेकिन जब ऐसी गतिविधियों की अति से पर्यावरण को स्थायी नुकसान हो जाता है तो प्रकृति भी उसकी प्रतिपूर्ति करने में समर्थ नहीं होती और फिर इसके कुपरिणाम सहन करने पड़ते हैं। चेरनोबिल परमाणु संयंत्र दुर्घटना और भोपाल गैस दुर्घटना इसके ज्वलंत उदाहरण हैं।

प्रदूषण से प्राकृतिक असंतुलन

वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि प्रदूषण और शोर प्रदूषण पर्यावरण के नाजुक संतुलन को बिगाड़ने के मुख्य कारण हैं। मनुष्य की विभिन्न गतिविधियों के फलस्वरूप इस प्रकार के प्रदूषणों के न केवल मनुष्य पर ही बल्कि जीव जन्तुओं और पेड़ पौधों पर भी बहुत बुरा असर पड़ता है।

वायु प्रदूषण

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वायु प्रदूषण एक ऐसी स्थिति है जिसमें बाहरी वातावरण में मनुष्य और उसके पर्यावरण को हानि पहुंचाने वाले तत्व संघन रूप में इकट्ठे हो जाते हैं। रासायनिक कारखाने, कपड़ा मिलें, ताप बिजलीघर और यातायात के साधन और घरेलू प्रदूषण वायु प्रदूषण के मुख्य कारण हैं।

इनसे कार्बन डाइआक्साइड, कार्बन मोनोआक्साइड, फ्लाई एश (राख), सल्फर डाइआक्साइड, फ्लोरीन गैस, अमोनिया, हाइड्रोकार्बन, धुंआ, नाइट्रोजन आक्साइड जैसे विषैले द्रव्य निकलते हैं जो वायु प्रदूषण फैलाते हैं। इस प्रदूषण का लोगों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है और शाक-सब्जियों में कई प्रकार की बीमारी हो जाती है। एक प्रमुख प्रदूषण अनुसंधान संस्थान के अनुसार कलकत्ता के 60 प्रतिशत लोग वायु प्रदूषण के कारण सांस की बीमारी से पीड़ित हैं। धूल के कणों और क्षयकारी गैसों के कारण इमारतें आदि भी खराब हो जाती हैं। वाहनों से निकली कार्बन मोनोआक्साइड से खून और पेशाब की बीमारियां बनने का खतरा बना रहता है। चिन्ता की बात यह है कि जहां पश्चिमी देशों के प्रमुख शहरों में वायु प्रदूषण घटता जा रहा है वहां भारत में यह लगातार बढ़ता जा रहा है।

जल प्रदूषण

जल प्रदूषण आधुनिक सभ्यता का एक सबसे बड़ा संकट है। नेशनल एनवाइर्नमेंटल इंजीनियरिंग एण्ड रिसर्च इंस्टीट्यूट (नीरी) के वैज्ञानिकों के अनुसार भारत में उपलब्ध कुल पानी का लगभग 70 प्रतिशत प्रदूषित है। गंगा जैसी नदियां

भी आज खूब प्रदूषित हो रही हैं। उद्योगों और बस्तियों व शहरों का गंदा पानी और तेलीय पदार्थ इस प्रदूषण के मुख्य स्रोत हैं। इस भारी प्रदूषण का परिणाम राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा है। एक मोटे अनुमान के अनुसार भारत में होने वाली दो तिहाई बीमारियां पानी से होती हैं जैसे टाइफाइड, पीलिया, हैजा, अतिसार और पेचिश।

पानी के प्रदूषण का गंभीर परिणाम समुद्री जीवों पर भी होता है। एक अनुमान के अनुसार प्रति वर्ष लगभग एक करोड़ टन तेलीय पदार्थ समुद्रों में गिराये जाते हैं। उद्योगों के प्रदूषणकारी तत्वों के कारण भारी मात्रा में मछलियों का मर जाना और समुद्र के निचले भाग के जीव जंतुओं का नष्ट होना एक आम बात हो गई है। प्रदूषण के कारण भारी हुए पानी का औद्योगिक उत्पादन पर भी बुरा असर पड़ता है।

भूमि प्रदूषण

खेती का कूड़ा कचरा, खानों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ, गोबर, बूचड़खाने से फैंकी जाने वाली बेकार खालें व हड्डियां, भूमि पर उर्वरकों, कीटनाशकों का अनावश्यक इस्तेमाल भूमि प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। भूमि के कुप्रबंध के कारण हम अपनी भूमि की क्षमता का पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा सकते हैं। भू-क्षरण हमारे देश की एक प्रमुख समस्या है। कुल वन क्षेत्र के तिहाई हिस्से में, खेती की कुल भूमि के लगभग दो तिहाई हिस्से में और लगभग कृषि योग्य पड़ती जमीन में और चरागाहों में तत्काल भू-संरक्षण की जरूरत है। पर्यावरण की क्षति से कृषि, पशु और वनों के उत्पादन को भारी नुकसान हो रहा है। भू-क्षरण के कारण बाढ़ें बढ़ रही हैं और बांधों में गाद भरती जा रही है। बड़े पैमाने पर बहकर आने वाली मिट्टी तालाबों, जलाशयों, झीलों और नदियों में जमा हो जाती है और इससे भारी बाढ़ें आती हैं।

शोर की आफत

शोर केवल एक आफत ही नहीं है बल्कि यह स्वास्थ्य के लिए भी बहुत बुरा होता है। कारखानों, मोटर वाहनों, रेलगाड़ियों और हवाई जहाजों के अलावा जुलूस जलसों का शोर भी स्वास्थ्य की क्षति में निरन्तर योगदान कर रहा है। शोर से स्थायी बहरापन हो सकता है। इस स्थिति के कारण कारखानों के मजदूरों, हवाई अड्डों के आसपास रहने वाले लोगों में शोर के कारण ही स्नायुरोग और पेट के रोग की शिकायतें पाई जाती हैं। ऐसे भी प्रमाण मिले हैं कि अत्यधिक शोर के कारण दिल का दौरा भी पड़ सकता है। लगातार शोर की स्थिति में रहने के कारण उच्च रक्तचाप या अल्सर भी हो सकता है।

पर्यावरण की सुरक्षा के बारे में विश्व भर में एक नई चेतना आई है। विकसित और विकासशील, दोनों देशों में पर्यावरण प्रदूषण के कुपरिणामों और संभावित खतरों ने ध्यान खींचा है।

हमारे देश की पर्यावरणीय संबंधी समस्याओं के कारण हमारे प्राकृतिक संसाधनों के संतुलन को खतरा पैदा हो गया है। बेकार चीजों को अनियमित रूप से फैंक देने और जहरीले रसायनों के अनुपयुक्त प्रयोग के कारण बड़े पैमाने पर पर्यावरण प्रदूषण हो रहा है।

अब हमारे देश में पर्यावरण सुरक्षा की जरूरत और पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न खतरे के बारे में काफी जागरूकता पैदा हुई है। स्वयं सरकार ने गंगा सफाई अभियान चलाकर और पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम लागू करके इस दिशा में एक बड़ी पहल की है।

पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम

विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों की रोकथाम के लिए देश में विभिन्न कानून मौजूद थे। लेकिन बदलती परिस्थितियों के कारण उन कानूनों में भी व्यापक परिवर्तन की जरूरत महसूस की जा रही थी। मौजूदा कानूनों की कमियों को दूर करने और उन्हें और ज्यादा प्रभावी बनाने के लिए पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम, 1986 बनाया गया। यह अधिनियम 19 नवम्बर, 1986 से लागू हो गया है।

अधिनियम में पर्यावरण के सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए उनके बारे में समुचित कार्रवाई करने के लिए एक प्राधिकरण का गठन करने की व्यवस्था की गई है। यह प्राधिकरण देश भर में विभिन्न क्रियान्वयन एजेंसियों को प्रदूषण की रोकथाम के लिए विभिन्न निर्देश देगा।

पर्यावरण प्रदूषण के निवारण और नियंत्रण के लिए एक राष्ट्रव्यापी कानून बनाकर उसे लागू करना, किसी व्यक्ति को परिसर में प्रवेश करने, निरीक्षण करने, नमूने लेने और जांच का अधिकार देना, पर्यावरणीय प्रयोगशालाएं स्थापित करना या उन्हें मान्यता देना, दुर्घटनाओं के लिए रक्षा उपाय निर्धारित करना तथा दुर्घटना होने पर समुचित उपाय करना, किसी उद्योग के संचालन या प्रक्रिया को सीधे

बन्द किए जाने, विनियमन अथवा बिजली, जल या किसी अन्य सेवा की आपूर्ति को रोकने के अधिकार सहित किसी अधिकारी को निर्देश जारी करना इस अधिनियम की अन्य विशेषताएं हैं।

यह अधिनियम नागरिकों को यह अधिकार देता है कि वे अधिनियम के प्रावधानों के किसी उल्लंघन के खिलाफ निर्धारित अधिकारियों को 60 दिन का नोटिस देकर, न्यायालयों में शिकायत कर सकते हैं। अधिनियम के अनुसार किसी विशेष स्थान के अधिकारी के लिए यह आवश्यक है कि यदि दुर्घटनावश किसी प्रदूषक का निर्धारित मात्रा से अधिक उत्सर्जन होता है या ऐसी आशंका होती है तो वह इसकी सूचना दे। इसकी सूचना मिलने पर या अन्यथा संबंधित अधिकारी प्रदूषण को समाप्त करने या कम करने के लिए उपाय करेंगे। इस काम पर हुआ खर्च ब्याज सहित प्रदूषणकर्ता से वसूल किया जाएगा।

अधिनियम में केन्द्र सरकार को यह जिम्मेदारी सौंपी गई है कि वह प्रदूषण और प्रदूषण फैलाने वाली घटनाओं को रोकने के उद्देश्य से उपाय करने के लिए खतरनाक पदार्थों के प्रयोग हेतु प्रक्रियाएं और रक्षा उपाय निर्धारित करें।

इस अधिनियम के तहत प्रदूषण के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार दस उद्योगों से निकलने वाले प्रदूषकों के विसर्जन के लिए मानक अधिसूचित किए गए हैं। इनमें कास्टिक सोडा के कारखानों, तेल शोधक कारखानों, चीनी के कारखाने, सूती वस्त्र कारखाने, ताप बिजलीघर, सीमेंट के कारखाने भी शामिल हैं। इस अधिनियम के तहत पर्यावरण प्रयोगशालाएं स्थापित की गई हैं और सरकारी विश्लेषकों की नियुक्तियां की गई हैं।

अधिनियम के प्रावधानों के तहत पहली बार न्यायालयों को पर्यावरण संबंधी अपराधों की सुनवाई का अधिकार दिया गया है। दोषी पाये गए व्यक्तियों को सात वर्ष तक कैद तथा एक लाख रुपया जुर्माने की सज़ा दी जा सकती है।

प्रधानमंत्री द्वारा गंगा सफाई अभियान का उद्घाटन

कार्यान्वयन के सुपरिणाम

अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों को लागू करने के सुपरिणाम भी सामने आ रहे हैं। देश में इस समय बड़े और मझौले दर्जे के चार हजार से अधिक ऐसे कारखाने हैं जिनसे विभिन्न प्रकार का प्रदूषण फैलता है। सरकार द्वारा की गई कार्रवाई के फलस्वरूप 2,076 कारखानों ने अपने यहां के प्रदूषित विसर्जकों के शोधन के लिए संयंत्र लगा लिए हैं। 1986 तक केन्द्रीय और राज्य बोर्डों ने प्रदूषण फैलाने वाले 783 कारखानों के खिलाफ मुकदमें चलाये इनमें 138 का फैसला सरकार के पक्ष में हो चुका है। बाकी मुकदमें अभी अनिर्णीत पड़े हैं।

नागपुर स्थित राष्ट्रीय पर्यावरण इंजीनियरी अनुसंधान संस्थान देश के 10 शहरों में वायु प्रदूषण स्तरमापने के लिए 30 अनुश्रवण केन्द्रों की स्थापना करके प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की सहायता कर रहा है। इसके अलावा केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण और निवारण बोर्डों ने भी 29 ऐसे केन्द्र स्थापित किए हैं। केन्द्रीय प्रदूषण निवारण और नियंत्रण बोर्ड के अनुसार देश के सीमेंट कारखाने में ऐसे उपाय किए जा रहे हैं जिनसे 1988 के अंत तक सीमेंट कारखानों से वायु में होने वाला प्रदूषण समाप्त हो जाएगा।

गंगा सफाई अभियान

गंगा सफाई अभियान देश के प्रमुख जल संसाधनों में व्याप्त प्रदूषण की रोकथाम की सरकार द्वारा दी गई प्राथमिकता का एक उदाहरण है। इस महत्वाकांक्षी अभियान का शुभारम्भ स्वयं प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने जून, 1986 में वाराणसी में एक भव्य समारोह में किया था।

गंगा नदी के जल को फिर से स्वच्छ बनाने के लिए एक दीर्घावधि कार्यक्रम तैयार करने तथा इसको लागू करने के लिए फरवरी, 1985 में केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण का गठन किया गया था। प्रधानमंत्री इस प्राधिकरण के अध्यक्ष हैं। उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री इसके सदस्य हैं। पांच और सदस्यों को शामिल करके इस प्राधिकरण का विस्तार किया गया है।

व्यापक कार्य योजना

केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण ने उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल, तीन राज्यों के लिए 291 करोड़ 31 लाख रुपये के परिव्यय सहित एक निर्माण कार्यक्रम को सिद्धांत रूप से स्वीकृति दी है। गंगा कार्य योजना के अंतर्गत शामिल की गई योजनाओं में अवरोधकों और पम्पिंग स्टेशनों के आरक्षण और स्थापना सहित गंगा में गंदे पानी के बहाव को रोक कर दूसरी दिशा में मोड़ने की योजनाएं, मल-जल उपचार संयंत्रों के नवीनीकरण या स्थापना की योजनाएं तथा नदी के मुहानों के विकास और जैव संरक्षण हेतु कम लागत वाली सफाई सुविधाओं की अन्य योजनाएं शामिल हैं। गंगा कार्य योजना के अन्तर्गत 27 नगरों में 250 योजनाएं लागू की जाएंगी।

योजनाओं की प्रगति

उत्तर प्रदेश में हरिद्वार और ऋषिकेश में गंदे पानी को दूसरी जगह ले जाने के लिए सीवर डालना, सीवर में गाद भरने से रोकने के लिए चेक डेम का निर्माण करना, कानपुर में ट्रंक एवं मेन सीवर की सफाई की योजना, विभिन्न शहरों में चलाई जा रही गंदे जल के प्रबंध की मुख्य योजनाओं में शामिल हैं। इनमें दो योजनाएं पूरी की जा चुकी हैं।

इन्हीं योजनाओं के अन्तर्गत वाराणसी के निकट रामनगर में एक मल प्रणाली उपचार संयंत्र तथा जल मल फार्म पूरा किया जा चुका है। अब गंदे जल को सिंचाई के काम में लाने के लए जल मल फार्म की ओर भेजा जाता है।

इसके अलावा बिहार में भागलपुर में और मुंगेर में कम लागत में सफाई की योजनाएं चलाई जा रही हैं। वहां छपरा में खनुआ नाले को रोक कर दूसरे मार्ग पर ले जाने का काम भी चल रहा है। पटना में सैदपुर और बेफर में 6.2 एम.जी.डी. और 3.3 एम.जी.डी. की क्षमता वाले दो उपचार संयंत्रों का नवीनीकरण किया गया है और उनमें काम शुरू हो गया है।

पश्चिम बंगाल में टीटागढ़ में गंगा में गंदे जल के बहाव को रोक कर दूसरी तरफ मोड़ने तथा कलकत्ता में कम लागत से सफाई की अनेक योजनाएं चलाई जा रही हैं। चन्दन नगर में जल मल उपचार संयंत्र का निर्माण भी इन्हीं योजनाओं के तहत किया जा रहा है।

गंगा कार्य योजना के प्रारंभिक चरण में जल-मल उपचार पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। बाद के चरणों के आवाह क्षेत्रों में वनरोपण और पौध रोपण, नदी के मुहानों के विकास तथा नदी का उपयोग करने वालों के लिए सुविधाओं का सुधार भी किया जाएगा। गंगा सफाई

अभियान की विभिन्न योजनाओं की प्रगति संतोषजनक है।

दूसरी नदियों की सफाई

गंगा के अलावा यमुना नदी की सफाई का काम भी शुरू किया जा रहा है। इलाहाबाद में यमुना नदी की सफाई का काम पहले ही शुरू किया जा चुका है। फरीदाबाद, दिल्ली, मथुरा, वृन्दावन और आगरा में भी यमुना नदी की सफाई किए जाने का प्रस्ताव है। इसके अलावा देश की 13 बड़ी नदियों के जल की गुणवत्ता का सर्वेक्षण किया जा रहा है।

मौजूदा संस्थाओं की समीक्षा

पर्यावरण की सुरक्षा के लिए राज्यों में विद्यमान संस्थाओं की समीक्षा की गई है। यह विचार किया गया है कि सरकारी स्तर पर पर्यावरण की सुरक्षा के लिए विभिन्न कार्यों को समन्वित करने हेतु प्रत्येक राज्य में पर्यावरण विभाग होना चाहिए। अब तक 18 राज्यों ने पर्यावरण विभाग स्थापित कर लिए हैं। इन्हें सुदृढ़ बनाने के लिए प्रत्येक राज्य में प्रस्ताव मांगे गए हैं। इस काम के लिए 80 लाख रुपये की व्यवस्था की गई है। सातवीं योजना के बाकी वर्षों में यह योजना जारी रखी जाएगी।

सरकार ही नहीं, अब तो गैर सरकारी संगठन भी पर्यावरण में बढ़ते प्रदूषण की रोकथाम में योगदान करने के लिए आगे आ रहे हैं। विभिन्न विश्वविद्यालय और गैर सरकारी संस्थाएं पर्यावरण प्रदूषण के बारे में जानकारी देने के अलावा लगभग 500 अनुसंधान परियोजनाएं पूरी कर चुकी हैं। इन परियोजनाओं में पर्यावरण विकास के लिए ठोस वैकल्पिक उपाय भी सुझाये गए हैं। पर्यावरण और वन मंत्रालय ने ही इन परियोजनाओं पर काम करने को कहा था।

पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम के लिए सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर जो प्रयास किए जा रहे हैं वे शुद्ध पर्यावरण के प्रति बढ़ती हुई जागरुकता का परिचायक हैं। यह तो मात्र एक शुरूआत है। अभी इस दिशा में बहुत काम किया जाना है। हमें यह देखना होगा कि पर्यावरण की शुद्धता के प्रति पैदा हुई यह जागरुकता बनी रहे ताकि पर्यावरण को शुद्ध बनाने का सिलसिला जारी रहे, ताकि भविष्य में कहीं भी गैस त्रासदी न हो।

349, कटरा बुधानराय,
दिल्ली गेट, नई दिल्ली

राष्ट्र द्वारा कुष्ठ रोग मुक्त कृषक का सम्मान

श्री एच. नानजांह अपने आप में अद्वितीय हैं। वर्ष 1987 में विकलांग कल्याण राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त कर्त्ताओं में से केवल वह ही एक कृषक हैं। बिल्कुल अनपढ़ होने के बावजूद भी उन्होंने न केवल कुष्ठ रोग के विनाश से मुकाबला किया बल्कि अपने दो एकड़ भूमि के टुकड़े को विकसित करके अपने आप आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बन गए। अब वह एक परिवार के स्वाभिमानी मुखिया हैं तथा उनके तीन बच्चे हैं।

श्री नानजहां का जन्म कर्नाटक के तुम्कुर जिले के बानसागिरा गांव में सन् 1936 में हुआ। जब वह34 वर्ष के थे तब वह कुष्ठ रोग का शिकार हो गए। यद्यपि वह पूर्णतया रोग मुक्त हो चुके हैं फिर भी इस रोग से उनके दोनों हाथ खराब हो गए हैं। इस दुर्भाग्य के बावजूद भी श्री नानजहां ने हिम्मत नहीं हारी और वह खेती का कार्य करते रहे। वह कृषि के कार्य में दस वर्ष की आयु से ही अपने माता-पिता का हाथ बटा रहे हैं। वह गर्व से कहते हैं कि वह स्वयं हल चला सकते हैं और खेती बाड़ी का सारा काम स्वयं करते हैं।

उन्होंने न केवल कठिन परिश्रम की क्षमता का परिचय दिया है, बल्कि अपनी दूरदर्शिता भी दिखाई है। परिवार में संपत्ति के विभाजन से उन्हें केवल दो एकड़ भूमि का टुकड़ा मिला जो एक पूरे परिवार के जीवन निर्वाह के लिए बहुत कम था। उन्होंने अपने कृषि उत्पादन बढ़ाने और अपने परिवार की आय में बढ़ोतरी करने के उद्देश्य से बैंक से ऋण के लिए आवेदन किया और उन्हें ऋण मिल गया। उन्होंने दो गायें भी प्राप्त की हैं। जिससे उनके परिवार की आय में वृद्धि हुई है। इसके परिणामस्वरूप श्री नानजहां अपने तीन बच्चों के परिवार के साथ खुशी का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

बुद्धिमता और साहस के बलबूते पर प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद, एक विकलांग के रूप में उन्होंने प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त करके राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त की है।

पेड़ लगाओ, प्रदूषण हटाओ

खजान सिंह

वृक्ष मनुष्य के जीवन का एक जरूरी अंग है। जिससे जलाने के लिए लकड़ी, घरों के लिए फर्नीचर, खेतीबाड़ी के औजार व पशुओं के लिए हरा चारा मिलता है। इसके अलावा वृक्षों का महत्वपूर्ण कार्य वातावरण को साफ रखना, मिट्टी को स्थिरता प्रदान करना, चिलचिलाती धूप व आंधी से बचाव इन सबके साथ-साथ आर्थिक विकास में भी योगदान देना है। भारत की कुल भूमि का 22.7 प्रतिशत हिस्सा जंगलों से ढंका हुआ बताया जाता है। जबकि वास्तव में 13 प्रतिशत पर ही कहने लायक पेड़ पौधे हैं। जिसमें से 1.5 है. जंगल प्रति वर्ष खत्म किये जा रहे हैं, और अब यह क्षेत्र सिर्फ 11 प्रतिशत ही रह गया है। वातावरण को शुद्ध रखने व अन्य जरूरतों को पूरा करने के लिए राष्ट्रीय कृषि विकास के अनुसार कुल भूमि का तीसरा हिस्सा जंगलों से ढंका हुआ होना चाहिए। लेकिन जंगल दिन प्रतिदिन बढ़ने की बजाए उल्टे बहुत तेजी से कम किए जा रहे हैं।

वनों के अभाव के कारण ऋतु चक्र में परिवर्तन आ रहा है, जीव जन्तु लुप्त हो रहे हैं। दुनिया में बंजर इलाके बढ़ते जा रहे हैं। हवा, बाढ़ व सूखे का प्रकोप दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। बाढ़ के कारण हमारी 225 लाख एकड़ भूमि प्रतिवर्ष खराब हो जाती है तथा फसलों व जानमाल के कारण 4 करोड़ रुपये का नुकसान हमारे देश को भुगतना पड़ता है। देश की छोटी व बड़ी नदियां जो कि लगभग 70 हैं, दिन प्रतिदिन प्रदूषित हो रही हैं। उद्योगों की भट्टियों का धुआं, शहरों के गंदे नालों की बदबू वायु मण्डल को दूषित बना रहे हैं। इसका दोषी है आदमी। क्योंकि मनुष्य को विकास की दौड़ ने विनाशकारी बना दिया है और उसने अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए वनों पर कुल्हाड़ी चलाना शुरू कर दिया है। जिसके कारण जंगल लुप्त होते नजर आ रहे हैं। अब समय आ गया है कि यदि सावधानी नहीं बरती गई तो मनुष्य व जीव जन्तुओं का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है। इसलिए धरती पर हो रहे पर्यावरण के इस नुकसान को रोका जा सकता है तो सिर्फ पेड़ लगाकर ही, पेड़ काट कर नहीं।

राष्ट्रीय कृषि विकास के अनुसार मनुष्यों के लिए लकड़ी व पशुओं के लिए चारे की मांग और उपलब्धता के बीच काफी अन्तर है। आज हमें 39 मि.टन लकड़ी जंगलों से प्राप्त हो रही है। जबकि जरूरत है 133 मि. टन लकड़ी की और इस कार्य से लगभग एक मिलियन लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इस तरह से यदि इस कमी को पूरा किया जए तो इससे 2.5 मिलियन लोगों को और रोजगार मिल सकता है। लकड़ी की इतनी कमी के कारण ही पिछले 15 सालों में 10 गुणा से भी ज्यादा कीमतें बढ़ चुकी हैं। लेकिन सरकार के पास न तो इतनी क्षमता है और न ही इतना पैसा कि इस कमी को पूरा किया जा सके। फिर भी सातवीं पंचवर्षीय योजना के तहत 2,500 करोड़ रुपये वनों के लिये घोषित किए गए हैं।

पानी एवं हवा के प्रदूषण को रोकने के लिए सरकार ने 1974 में एक कानून भी बनाया था तथा 18 ऐसे बोर्डों का गठन भी किया गया था जिनका मुख्य उद्देश्य कानून को लागू करना तथा हवा और पानी को प्रदूषित होने से बचाना था, लेकिन ये भी इतने प्रभावशाली सिद्ध न हो सके। इन सब समस्याओं के समाधान के लिए पेड़ लगाना जरूरी है। इसलिए हमारे प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने भी एक नेशनल वेस्ट लैण्ड डवलपमेंट बोर्ड का गठन किया है जिसका मुख्य उद्देश्य हर साल 50 लाख हैक्टेयर बंजर व बेकार भूमि पर पेड़ लगाना है। क्योंकि भारत की लगभग 7

मि. है भूमि बंजर व बेकार है जिन्हें अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। जैसा कि कल्लर, ऊसर, चौरन तथा उप्पु इत्यादि। इन भूमियों में घुलनशील नमक की मात्रा इतनी अधिक होती है कि कुछ भी पैदा नहीं होता है, यदि होता है तो वह भी सिर्फ नाममात्र, ऐसी भूमि में पेड़ सफलतापूर्वक लगाए जा सकते हैं। वनों के महत्व को समझते हुए और पर्यावरणको मद्दे-नजर रखते हुए भारत सरकार ने हिमाचल प्रदेश में डा. वाई.एस. परमार होरटीकल्चर एवं फोरेस्टरी विश्वविद्यालय खोलने का फैसला किया है तथा इसके साथ-साथ हर कृषि विश्वविद्यालयों में वन विभाग भी खोले जा रहे हैं ताकि आने वाली पीढ़ी को वनों की कमी के कारण होने वाले नुकसान के बारे में अवगत कराया जा सके।

16-20 फरवरी, 1987 को केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल ने एक अंतर्राष्ट्रीय सिम्पोजियम का भी आयोजन किया, जिसमें देश-विदेश के जाने-माने वैज्ञानिकों ने हिस्सा लिया। इसका मुख्य उद्देश्य क्षारीय व लवणीय भूमियों पर वन लगाना था। यदि ठीक विधि को अपनाया जाए तो ऐसी भूमियों में एकेशिया-निलोटिका (जंगली बबूल), प्रसोपिस ज्यूलिफ्लोरा (मैसकीट) केसूरीना एक्विजेटीफोलिया (जोर-तोर) और सेसबेनिया एजिप्टिका (ढैंचा) सफलतापूर्वक उगाए जा सकते हैं। ऐसी भूमि पर पेड़ लगाने से कम लागत और मेहनत से उपजाऊ भी बनाया जा सकता है तथा जो जमीन पानी से डूबी हुई है उसमें पानी की तह भी नीचे चली जाती है। सबसे जरूरी तो यह है कि ऊर्जा संकट और पर्यावरण प्रदूषण से होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

पेड़ों की कमी के कारण होने वाले जान और माल के नुकसान की इस चुनौती से देश को बचाया जा सकता है इसीलिए अनेक सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं, एजेंसियों के साथ-साथ बड़े किसानों, पंजायतों, सहकारी संगठनों, महिला मण्डलों, स्कूलों तथा युवा मंचों आदि को आगे आना होगा। इसके साथ-साथ हर एक मनुष्य को इस चुनौती के बारे में अवगत कराना होगा और उसे समझने के लिए मजबूर करना होगा कि यदि उसे सुखप्रद वातावरण में जीना है तो पेड़ लगाएं, काटें नहीं।

बंजर धरती करे पुकार
पेड़ लगाओं करो उपकार

वैज्ञानिक एस-1
केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान
संस्थान, करनाल-132001

सवेरा

शिशिर विक्रांत

एक-दूसरे से जुड़, आओ गायें हम,
फिर से टूटे घर को चलो बनायें हम
बहुत दिनों से पसरा पड़ा अंधेरा है,
हंसता-गाता नया सवेरा लायें हम।
कर लेने दो सूरज को भी मनमानी,
तपन दूर हो ऐसे बादल छायें हम।

कितना जहर उड़ेलेंगे हम भी देखें,
त्रिपुरारी बन सारा विष पी जायें हम।
कितना-कुछ धीरे-धीरे खो डाला है,
और न खोयें, इस पर ध्यान लगायें हम।
आततायी हों अनगिन, होते क्षणजीवी
तूफां बन कर उनको मध्य समायें हम।
गांव-गांव उजड़ा-सा चौपालें सूनीं,
कभी न उजड़े ऐसा स्वर्ग बसायें हम।
नहीं हुआ है हाय-हाय करने से कुछ,
राम-कृष्ण बन फिर सतयुग ले आयें हम।

चकिया इलाहाबाद
211016 (उ.प्र.)

खुशहाली

देवेन्द्र उपाध्याय

उसकी आंखें जैसे ठहर गयीं। चारों तरफ अजीब-सा सूखापन दिखाई दे रहा था। जहां कभी पेड़ ही पेड़ थे वहां अब नंगे पहाड़ दिखाई दे रहे थे।

वर्षों बाद वह गांव लौटा था। हरियाली का कहीं पता नहीं था। पहले जून के महीने में शाम होते ही स्वेटर की जरूरत होती थी और अब स्वेटर थैले में रखा रह गया था। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। आखिर यह सब कैसे हो गया।

उसने मन ही मन कुछ फैसला कर लिया। उसने सोच लिया कि पूरे दो महीने गांव में रहकर कुछ करेगा।

रात को घर पर उसके कई दोस्त इकट्ठे हो गये। उसने इधर-उधर की बातचीत के बाद कहा — "जंगल को क्या हो गया है? गांव में बंजर जमीन बढ़ती ही जा रही है। तुम लोग गांव में रह कर क्या कर रहे हो।"

सब एक दूसरे को देखने लगे। किसी के पास कोई जवाब नहीं था। तब उसने फिर कहा — "विकास का दफ्तर कोई दूर नहीं है। हर साल वहां पेड़ आते हैं, कीमत भी कोई ज्यादा नहीं। अगर हर परिवार साल में दस पेड़ भी लगा ले तो जिस हरियाली को सब तरस गये हैं, वह फिर लौट आयेगी।"

ऐसा किसी ने सोचा नहीं था। विक्रम की बातों का काफी असर पड़ने लगा। विक्रम ने फिर कहा — "देखो, पेड़ कई तरह के हैं। कुछ फलदार हैं तो कुछ पशुओं के लिए उपयोगी हैं, जो बाद में लकड़ी के काम भी आ सकते हैं। इसलिए गांव में हर तरह के पेड़ लगने चाहिए।"

उसकी बात से सभी सहमत हुए। गांव में साठ परिवार हो गये थे। कुछ ही साल पहले तक चालीस परिवार थे। जमीन तो उतनी ही थी पर खाने वालों की तादाद बढ़ती जा रही थी। पूरे साल मेहनत करने के बाद दो महीने के लिए भी अनाज नहीं हो पाता। सबकी नजरें हर महीने शहरों में नौकरी कर रहे परिवार के लोगों की मनीआर्डर की इंतजार करतीं। मनीआर्डर आता और फिर अगले महीने के लिए इंतजार शुरू हो जाती। बरसात ने सबको भाग्यवादी बना कर रख दिया। कभी वर्षा कम होती, कभी अधिक होती। लोगों ने इतना भी नहीं सोचा कि जब जंगल न होंगे तो फिर हरियाली कैसे रहेगी। हरियाली का मतलब है प्रकृति, जिसमें पशु-पक्षी और मनुष्य सब कुछ हैं। प्रकृति नहीं तो इन सबका भी अस्तित्व नहीं रहेगा।

विक्रम ने अपने मित्रों को समझाया — "खेती के लायक हमारे पास पर्याप्त जमीन है नहीं। अगर समय पर वर्षा हो भी गई तो कितना अनाज होगा। कभी डेढ़-दो महीने के लिए हो जाता है तो कभी ढाई-तीन महीने के लिए। इसलिए फलों के पेड़ लगाओ। आने वाले चार-पांच वर्षों में ही अच्छा पैसा मिलने लगेगा। भेड़ें पालो, बकरियां पालो, मुर्गीपालन का काम शुरू करो या फिर खरगोश पालो — सबके लिए कर्ज मिलेगा। ये ऐसी चीजें हैं जिनसे तुम लोगों को फायदा ही होगा। कम से कम खेती से तो अधिक फायदा होगा। जमीन अधिक हो, उपजाऊ हो तो खेती से फायदा है। पर दो-तीन खेतों में क्या गुजारा होगा। फिर खाने वाले हाथ बढ़ ही रहे हैं। इन सब दूसरे धंधों से गांव का भी विकास होगा। ज्यादा लोग भेड़ें और ऊन वाली खरगोश पालेंगे तो लोगों को ऊन कताई का काम मिलेगा, ऊनी कपड़े बनाने के लिए चरखों-करघों पर काम मिलेगा। इससे रोजगार बढ़ेगा कि नहीं? बोलो।"

सुनील, मोहन, चन्दन, नरेश, सुधीर सब एक स्वर में कहने लगे — "हां भइया, बात तो ठीक है।"

"तो फिर कुछ शुरू करो। तुम लोग जो गांव में बेकार घूमते रहते हो, कुछ काम करो। शहरों में जाओगे तो क्या मिलेगा — चार सौ-पांच सौ मिल जायेगा। इसमें तुम्हारा अकेले का भी गुजारा नहीं हो पायेगा। जो घर में यहां है, उनका क्या होगा। विक्रम ने उन्हें समझाते हुए कहा।"

सुनील बोला — "भइया, यहां अब तो बैंक भी खुल गया है।"

'तो फिर ऐसा करो कि सब यहां तय कर लो कि कौन क्या करेगा। पेड़ों के लिए तो सब गड्ढे खुदवा लो फिर कल-परसों विकास दफ्तर चलेंगे, जितने पेड़ वहां हार्टिकलचर में मिलेंगे, ले आयेंगे। या फिर उनसे मंगाने के लिए कह देंगे।'

सबने इसके लिए सहमति जताई। इस बीच सबने तय कर लिया कि सब पेड़ों के लिए कल गड्ढे खोदेंगे।

दूसरे दिन सभी साठ परिवारों ने अपनी-अपनी जमीन में

गड्ढे खोद लिए। पूरे गांव में चार सौ से कुछ ज्यादा ही गड्ढे खुद गए।

इस बीच आस-पास के गांवों से भी विक्रम से मिलने उसके दोस्त आ गये। सबको विक्रम की सलाह काफी अच्छी लगी। उनमें कई उत्साही भी थे।

दो-तीन दिन के भीतर आस-पास के कई गांवों में पेड़ों के लिए गड्ढे खोदने का अभियान शुरू हो गया। हजारों गड्ढे खुद गये।

सप्ताह बाद विक्रम अपने तीन-चार दोस्तों को साथ लेकर सीधा बी.डी.ओ. के पास चला गया। उसने अपनी सारी स्कीम उन्हें बताई। बी.डी.ओ. उसकी स्कीम से काफी प्रसन्न हुए। वे बोले – ''अगर आप जैसा उत्साही नौजवान हर गांव में हो तो गांवों का कायाकल्प हो सकता है। हर साल हम यहां सौ पेड़ मंगवाते हैं, उन्हें भी बड़ी मुश्किल से बेच पाते हैं। आपने तो एक ही सीजन में इतने पेड़ों की मांग कर दी है जितने हम दस साल में नहीं बेच पाते हैं। फलदार पेड़ के पौधे तो उद्यान विभाग के गोदाम में मिलेंगे। पर अच्छा हुआ आपने समय पर बता दिया – हमें अभी से आर्डर भेजने से पौधे समय पर मिल जायेंगे। वन विभाग वालों से दूसरे पौधे के लिए भी अभी से कह दूंगा। यह उत्साह बना रहा तो आने वाले दो-चार साल में ही यह पूरा इलाका फिर से हराभरा हो जायेगा। पानी के स्रोत भी जो पेड़ों के नष्ट होने से सूख गये थे फिर से खुल जायेंगे।''

अब विक्रम ने मुर्गीपालन, भेड़-बकरी पालन के बारे में कर्ज दिलाने के बारे में कहा तो बी.डी.ओ. साहब कहने लगे – ''अरे भई वाह, तुमने कमाल कर दिया। हम तो चाहते ही हैं। सरकार की कई योजनाएं हैं। इनमें कर्ज भी मिलता है, अनुदान भी। लोग फायदा उठाने वाले होने चाहिए। मैं कल ही ग्राम सेवक और ए.डी.ओ. को भेजकर स्कीमें तैयार करा देता हूं – आप लोग उनसे बात करके नाम लिखवा लें। जल्दी से जल्दी कर्ज और अनुदान दिलवा दूंगा। सरकार की स्कीमें चलें तभी फायदा होगा – आपका भी और सरकार का भी। ऐसी स्कीमें बनती ही जनता की भलाई के लिए। हम तो मदद करने के लिए हमेशा तैयार हैं।''

विक्रम अपने दोस्तों के साथ गांव लौटा। उसके बाद उसने घर-घर जाकर लोगों को उत्साहित करना शुरू कर दिया। गांव में सभी वर्गों के लोग रहते थे। आठ-दस घर ऐसे थे जिनके पास अपनी जमीन ही नहीं थी। उसने उन सबको सामूहिक मुर्गीपालन फार्म बनाने के लिए तैयार कर लिया। सात-आठ लोग भेड़ और बकरी पालने के लिए तैयार हो गए। उसने सारा विवरण तैयार कर लिया।

अगले दिन ग्राम सेवक अपने साथ ए.डी.ओ. को लेकर पहुंचे। उन्होंने सारा विवरण देखा। उन्हें पहली बार विवरण तैयार मिला। दोनों ने सारे कागजात तैयार करके अनुदान और कर्ज जल्दी से जल्दी दिलाने को आश्वासन दिया।

विक्रम को एक ही सप्ताह में काफी सफलता मिल गई थी। उसके गांव की देखा-देखी दूसरे गांवों के लोग भी आने लगे।

बरसात शुरू होने लगी थी। कुछ ही दिनों के भीतर फलदार पौधे भी आ गये। उधर वन विभाग के डिप्टी रेंजर का आदमी विक्रम के पास आया और कहा ''तीन-चार दिन में एक ट्रक पेड़ विकास दफ्तर के पास पहुंच जायेंगे, अपनी जरूरत के हिसाब से ले लें।''

पौधे आ गये। विक्रम ने पहले से ही सूची बना ली थी जिससे पौधों के वितरण का काम शुरू हो गया। सबको अपनी-अपनी जरूरत के अनुसर पौधे मिल गये। पूरे गांव में आठ सौ से ज्यादा पेड़ लग गये। इनमें आधे फलदार थे और आधे साल, चीड़ और कुछ बांस थे।

गांव की बंजर धरती पर हरियाली फैलने लगी। विक्रम को लगा कि अब गांव की खुशहाली को कोई रोक नहीं सकता।

विक्रम के वापस लौटने में एक सप्ताह से भी कम रह गया था। जाने से पहले वह विकास दफ्तर गया। वहां पता चला कि दूसरी स्कीम भी मंजूर हो गई। अब मुर्गियां और मेरीन भेड़ें आने पर सबको बांट दी जायेंगी। इससे पहले मुर्गी बाड़ा बनाने के लिए अनुदान बांटने की मंजूरी आ गई थी।

विक्रम का प्रयास सफल हो गया। उसे इतनी जल्दी गांव वालों के तैयार होने की उम्मीद नहीं थी – लेकिन सब कुछ बड़ी आसानी से हो गया। उसने तय कर लिया कि अब वह हर साल गांव आकर आस-पास के गांवों को भी उजड़ने से बचायेगा। अगर गांव नहीं रहेंगे तो फिर देश नहीं रहेगा।

सी-7/18 ए, लारेंस रोड
दिल्ली-110035

सड़क दुर्घटनाएं: कारण और निराकरण

अभयकुमार जैन

नेशनल रोड ट्रांसपोर्ट काउंसिल एवं ट्राउमा केयर एसोसिएशन की एक अध्ययन रिपोर्ट के मुताबिक भारत में सड़क दुर्घटनाओं में हर वर्ष 25,000 से अधिक व्यक्तियों को अपने प्राण गंवाने पड़ते हैं तथा इससे पांच गुने अधिक घायल होते हैं। सड़क दुर्घटनाओं में मरने वालों की संख्या कैंसर और हृदय रोग से मरने वालों की संख्या के बाद तीसरे नम्बर पर आती है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार बसों, ट्रकों के उलटने से वर्ष भर में चार सौ करोड़ रुपये से अधिक का नुकसान होता है। दुनिया के कुल सड़क वाहनों का एक प्रतिशत ही हमारे देश में लेकिन विश्व में कुल दुर्घटनाओं का छः प्रतिशत भारत में है। सन् 2000 में आशा है कि सड़क द्वारा माल ढोने में सन् 1951 को देखते हुए 56 प्रतिशत तक वृद्धि हो जायेगी और यात्री 73 प्रतिशत। इस प्रकार यातायात के साधनों एवं जनसंख्या में निरंतर बढ़ोतरी के कारण दुर्घटनाओं में भी निश्चित रूप से बढ़ोतरी होगी। किन्तु दुर्घटनायें जब प्राकृतिक होती हैं तो उससे होने वाली जन धन हानि को विवशता से झेला जा सकता है किंतु दुर्घटनाएं जब लापरवाही और उदासीनता का परिणाम होती हैं तो कुछ सोचने के लिए विवश कर देती हैं।

सड़क परिवहन के केन्द्रीय संस्थान के निदेशक श्री पी.जी. पाटनकर ने दुर्घटनाओं के अध्ययन विश्लेषण के तहत उस बिंदु पर प्रकाश डाला है जो प्रायः उपेक्षित रहता है अर्थात वाहन चलाने वाला। उनका कहना है कि आज ड्राइवर बनने के लिए सबसे कम शिक्षा की जरूरत है। कोई भी व्यक्ति ड्राइविंग लाइसेंस प्राप्त कर सकता है। सड़क पर होने वाले हादसों में से 68 प्रतिशत के लिए श्री पाटनकर चालक की गलती को जिम्मेदार मानते हैं और वह गलती करता रहेगा क्योंकि उसकी भर्ती, शिक्षा, प्रशिक्षण, वेतन सुविधायें कुछ इस तरह के हैं कि वह गलतियां करता रहे। डा. पाटनकर का कथन है कि ड्राइवर और ड्राइवरी हमारे समाज में प्रतिष्ठित नहीं है। जहाज चलाने वाला कैप्टन, जहाज उड़ाने वाला पायलट और रेल इंजन चलाने वाला चालक को गरिमा प्राप्त है। उसका कुछ प्रतिशत भी ड्राइवर को नहीं मिल पाता।

वाहन चालन के साथ-साथ पैदल यात्री भी दुर्घटनाओं के लिए जिम्मेदार होते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि पद यात्री अचानक ही बिना सोचे समझे सड़क पर वाहन के सामने आ जाता है एवं वाहन चालक पूरी कोशिशों के बावजूद भी दुर्घटनाओं को घटित होने से नहीं रोक सकता। अतः पैदल यात्रियों को पूरी सतर्कता व सावधानी से इधर-उधर देखकर ही

सड़क पार करनी चाहिये।

गांव व शहरों के प्रायः पशुपालक अपने पशुओं को खुला छोड़ देते हैं। इसके अलावा आवारा जानवर भी घूमते फिरते रहते हैं जिनके कारण आवागमन में अवरोध होता है। कई दुर्घटनायें तो केवल जानवरों को बचाने के चक्कर में हो जाती हैं। अतः नगर पालिका या नगर परिषद् को इनकी समुचित व्यवस्था करनी चाहिये।

नशाखोरी की आदत भी दुर्घटनाओं की संख्या बढ़ाने में काफी हद तक जिम्मेदार है। वाहन चालकों का एक बहुत बड़ा प्रतिशत शराब का आदी होता है। शराब के नशे में थोड़ा असंतुलन होते ही दुर्घटना हो जाती है। अतः आज हमारा यह दायित्व है कि हम ऐसे वाहन चालकों को जो कि यात्रियों से भरपूर है — यदि वाहन चला रहा है तो उसे रोकें एवं वाहन चालक को चाहिए कि कम से कम जब वाहन चला रहा हो तो उसे नशे से दूर रहना चाहिये क्योंकि उनकी जिंदगी के साथ कई जिंदगी जुड़ी रहती हैं।

सड़क दुर्घटनाओं में बहुत कुछ अंश ओव्हर टेक का है। आज प्रत्येक व्यक्ति शीघ्र पहुंचना चाहता है। आज हम देखते हैं कि कोई वाहन हमारे आगे आता है तो गति बढ़ाकर उसे पीछा करना हर वाहन चालक का स्वभाव बन गया है। वाहन चालक ओव्हर टेक के नशे में इतना मशगूल हो जाता है कि यकायक आगे वाले वाहन के रुकने या बराबर साइड न देने या सामने आने वाले वाहन से संतुलन बिगड़ जाने के कारण दुर्घटना हो जाती है। अतः हमें चाहिये कि गति से पहले सुरक्षा का सूत्र ध्यान में रखें। कभी भी किसी व्यकित को ओव्हर टेक के लिए प्रेरित न करें।

यूं सड़क दुर्घटनाओं के लिए खराब सड़कें, खटारा गाड़ियां और खस्ताहाल रखरखाव भी जिम्मेदार है।

निरंतर बढ़ते हुए वाहनों को देखते हुएं सड़क दुर्घटनाओं में बढ़ोतरी होना स्वाभाविक है किन्तु कुछ सावधानियां रखने पर, इन दुर्घटनाओं को कुछ कम किया जा सकता है कहा भी जाता है कि 'सावधानी हटी — दुर्घटना घटी'।

1- पैदल यात्रियों को चाहिये कि वह हमेशा बांई ओर चलें एवं चौराहा पार करते समय चारों तरफ देखकर ही निकलें। बच्चों को सड़क पर नहीं खेलने दें।

2- वाहन चालकों को पर्याप्त प्रशिक्षण प्रदान करने या उनको उचित ज्ञान होने के पश्चात ही लाइसेंस प्रदान किये जायें।

3- नशे की हालत में वाहन को नहीं चलायें यदि यात्रियों को विश्वास हो जाय कि चालक नशे में है तो उसके खिलाफ कार्रवाई करें। कुछ यात्री शीघ्रता के लिए चालक को अधिक गति से चलने हेतु प्रेरित करते हैं तो उन्हें चाहिये कि वह ऐसा नहीं करें। कई बार बरसात के मौसम में पुल पर पानी होने की स्थिति में भी यात्री वाहन चालक को पुल पार करने के लिए प्रेरित करते हैं जो कि सभी यात्रियों व वाहन चालक के लिए दुर्घटना को निमंत्रण देता है।

4- कई वाहन चालक धुम्रपान करते हैं। वे चालू वाहन में ही मुंह में सिगरेट या बीड़ी रखकर माचिस जलाते हैं ऐसी स्थिति में वह स्टयरिंग को छोड़ कर ही माचिस जलाते हैं, यदि कभी चालक नियंत्रण खो बैठे तो भयंकर दुर्घटना हो सकती है। अतः वाहन चालक को यदि धुम्रपान ही करना है वाहन रोक कर या जहां स्टापेज हो वहां करना चाहिये।

5- कई बार वाहन चालक स्टापेज पर निर्धारित समय से अधिक रुक जाते हैं एवं उस समय को पूरा करने के लिए निर्धारित गति से तेज चलाते हैं। अतः समयानुसार ही वाहन चलाना चाहिये।

6- कई बार वाहन चलाते समय चालक यात्रियों से वार्तालाप में व्यस्त हो जाते हैं जिससे उनका ध्यान हट जाता है। अतः यात्रियों को चाहिये कि चालक से वार्तालाप नहीं करें।

7- सार्वजनिक निर्माण विभाग को चाहिये कि जगह-जगह पर ऐसे निर्देश व नारे लिखवाने चाहिये जिससे कि वाहन चालक पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़े जैसे धीमे चलिये-सुरक्षित पहुंचिये, गति से प्रथम सुरक्षा, कभी न पहुंचने से देर से पहुंचना अच्छा है, घर पर बच्चे आपका इंतजार कर रहे हैं। ऐसे नारे कई जगह देखने को मिलते हैं किंतु इनका पूरी तरह प्रचार होना चाहिये।

8- वाहन स्वामियों एवं वाहन चालकों को समय-समय पर वाहन चैक करते रहना चाहिये। प्रशासन को सड़क मरम्मत का कार्य समय-समय पर करवाते रहना चाहिये।

9- ओव्हर टेक किसी भी स्थिति में किसी भी व्यक्ति को नहीं करना चाहिये।

"तृप्ति" बन्दा रोड,
भवानीमंडी (राज.)

जनजाति क्षेत्रों के लिए आशा की नई किरण

अक्षय कुमार

पंचवर्षीय योजनाओं की मूलभूत धारणा के अनुरूप केन्द्रीय सरकार गरीबी को दूर करने के लिए कृतसंकल्प है। इसी लक्ष्य की पूर्ति के उद्देश्य से स्वयं प्रधानमंत्री ने देश के सबसे ज्यादा पिछड़े और दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों का दौरा किया तथा अत्यन्त विपन्न परिस्थितियों में जीवन बिता रही जनजातियों को करीब से देखा।

आदिवासी क्षेत्रों की यात्रा के दौरान प्रधानमंत्री की नजरों से वहां के निवासियों की यह दयनीय स्थिति न छिप सकी। तभी उन्होंने फैसला किया कि इन लोगों के लिए विशेष रियायती दरों पर अनाज मुहैया किया जाए ताकि कम से कम उनकी भोजन की समस्या का तो समाधान हो और उनके जीवन-स्तर को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने में मदद मिल सके। ऐसा होने पर ही वे देश के अन्य नागरिकों की तरह विकास कार्य में अपना योगदान कर सकेंगे।

इसी परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार ने नवम्बर, 1985 में एक योजना की घोषणा की, जिसके अन्तर्गत एकीकृत जनजाति विकास परियोजना क्षेत्रों में विशेष रियायती दरों पर अनाज की आपूर्ति का प्रावधान था। मूलतः गरीबी हटाओ कार्यक्रम का अंग यह योजना दिसम्बर, 1985 से शुरू हो गई और मई, 1986 तक सभी राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में लागू हो गई। इस योजना का लक्ष्य 181 एकीकृत जनजाति विकास परियोजना क्षेत्रों और जनजाति-बहुल छह राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों तथा मेघालय, नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, लक्षद्वीप तथा दादरा और नागर हवेली के लगभग 5 करोड़ 70 लाख निवासियों को सस्ता अनाज उपलब्ध कराना है।

योजना के प्रथम 13 महीनों में जनजाति क्षेत्रों में लगभग 18 लाख 70 हजार टन सभी तरह का अनाज सप्लाई किया गया।

लेकिन जहां एक ओर आशा का वातावरण बना है, वहीं कुछ समस्याएं भी पैदा हुई हैं, जिन्हें दूर करना होगा। राज्य सरकारों की सबसे बड़ी जिम्मेदारी यह है कि जिन लोगों के लिए यह विशेष सस्ता अनाज मुहैया कराया जा रहा है, उन्हीं को यह मिले। कुछ ऐसी शिकायतें भी मिलीं कि इस सस्ते अनाज को असामाजिक तत्वों द्वारा काले बाजार में पहुंचाने की कोशिश की जा रही है। ऐसी शिकायतों को रोकने के लिए राज्य सरकारों से अपेक्षा है कि वे आदिवासी क्षेत्रों में अनाज की सप्लाई पर कड़ी नजर रखें और जहां कहीं अनाज की मांग अचानक तेज़ी से बढ़ी है, वहां स्थिति की भलीभांति समीक्षा की जाए।

इससे रंचमात्र भी संदेह नहीं कि इस योजना की सफलता राज्य सरकारों द्वारा उठाए गए कदमों पर निर्भर करेगी। तालुका अथवा ब्लाक स्तर पर अनाज के गोदामों की स्थापना ऐसा ही कदम है, ताकि उचित दर दुकानों को सीधे नियमित रूप से सप्लाई हो सके। इसके लिए परिवहन की पर्याप्त व्यवस्था भी जरूरी है, चाहे इस काम को राज्य सरकार करें या नागरिक आपूर्ति निगम अथवा सहकारियां।

इस बात पर भी विचार किया जा सकता है कि उचित दर दुकानों को अधिक लाभप्रद बनाने के लिए उन्हें अन्य आवश्यक वस्तुएं बेचने की अनुमति दी जाए। उनकी कमीशन बढ़ाने पर भी विचार करना उचित होगा। प्रयास ऐसा होना चाहिए कि पांच किलो मीटर के इलाके में पड़ने वाले तीन-चार गांवों के लिए कम से कम एक उचित दर दुकान अवश्य हो। उन्हें बैंक आदि से कार्य पूंजी के लिए कर्ज दिलाने में भी मदद की जाए। बेहतर है कि अधिक दुर्गम क्षेत्रों में गाड़ियों के जरिए चलती-फिरती दुकानों की व्यवस्था हो, जो विशेषकर हाट के दिन वहीं अनाज की सप्लाई करें।

आदिवासी क्षेत्रों में विशेष रियायती दरों पर अनाज मुहैया कराने की यह योजना भले ही आकार में विशाल और परिकल्पना में नवीन न हो, किन्तु इसकी उपयोगिता निर्विवाद, संकल्प महान और लक्ष्य कल्याणकारी है। गरीबी को दूर करने की दिशा में यह महत्वपूर्ण है। इसकी सफलता राष्ट्र के लिए निश्चत ही गौरव की बात और एक उपलब्धि होगी। □

मत्स्योद्योग विकास

केदारनाथ गुप्त

मछली एक संतुलित आहार है। यह प्रोटीन, विटामिन्स तथा खनिज लवणों का एक अच्छा स्रोत है। मत्स्य पालन ग्रामीण विकास एवं उसकी प्रगति में सहायक होने के साथ ही अतिरिक्त आय का साधन भी है। मत्स्योद्योग का प्रमुख उद्देश्य समाज के कमजोर वर्गों के लोगों को रोजगार उपलब्ध कराकर उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार लाना है। इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मध्य प्रदेश शासन द्वारा निम्नलिखित योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं:—

(1) आदिवासी उपयोजना
(2) हरिजन विशेषांश योजना
(3) विश्व बैंक योजना
(4) सामान्य कार्यक्रम

आदिवासी उपयोजना

आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रो में आदिवासी उपयोजना मद के अंतर्गत विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से मत्स्यपालन के व्यवसाय को आदिवासियों में लोकप्रिय एवं व्यावहारिक बनाने का प्रयास किया जा रहा है ताकि वे इसे अपना कर अपनी आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति में सुधार ला सकें। आदिवासी उपयोजना मद के अंतर्गत निम्नांकित कार्यक्रम कार्यान्वित किये जा रहे हैं :—

ग्राम पंचायत के तालाबों में शतप्रतिशत अनुदान पर मत्स्यबीज संचय

आदिवासी क्षेत्र की ग्राम पंचायतों में शतप्रतिशत अनुदान पर मत्स्यबीज संचित किया जाता है तथा इन तालाबों से उत्पादित मछली आदिवासी महिलाओं तथा बच्चों में निःशुल्क वितरित की जाती हैं ताकि इन्हें प्रोटीनयुक्त भोजन उपलब्ध कराने के साथ-साथ इस व्यवसाय को लोकप्रिय भी बनाया जा सके।

आदिवासी मछुआ सहकारी समितियों को अनुदान

प्रत्येक आदिवासी मछुआ सहकारी समिति को मत्स्यपालन हेतु तालाब पट्टे पर उपलब्ध कराए जाते हैं। मत्स्योद्योग विभाग के तकनीकी मार्गदर्शन में प्रचलित नियमों का पालन करते हुए मत्स्यपालन के लिए अनुदान दिया जाता है जो कि निम्नानुसार है :—

क्रमांक वितरण	अनुदान प्रतिशत वर्ष			अनुदान सीमा तीन वर्षों में
	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	रुपयों में
1. हिस्सा पूंजी अनुदान	100	100	100	2000.00
2. तालाब पट्टा राशि	100	50	25	5500.00
3. मत्स्यबीज संचय	100	50	25	5000.00
4. नायलान धागा एवं डोंगा क्रय	100	100	100	12500.00
योग :				रुपये 25000.00

आदिवासी मत्स्यपालकों को सहायता

ऐसे मत्स्यपालकों को निम्नानुसार रुपये 5000.00 अनुदान दिया जाता है जो ग्राम पंचायतों के तालाब अथवा अन्य शासकीय तालाब पट्टे पर लेकर मछलीपालन करना चाहते हैं :—

क्रमांक विवरण	अनुदान प्रतिशत वर्ष			तीन वर्षों में अनुदान सीमा
	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	रुपयों में
1. तालाब पट्टाराशि	80	50	25	1375.00
2. तालाब सुधार	80	—	—	1000.00
3. मत्स्यबीज एवं अन्य सुविधाएं	80	50	25	1250.00
4. नाव जाल	—	50	50	1375.00
योग :				रुपये 5000.00

आदिवासी मछुआ प्रशिक्षण

आदिवासी मत्स्यपालकों को मछलीपालन की वैज्ञानिक एवं आधुनिक तकनीक से अवगत कराने तथा नाव जाल आदि की जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य से एक माह का प्रशिक्षण दिया जाता है जिसमें उन्हें पारिश्रमिक, भत्ता एवं जाल बनाने हेतु दो किलो नायलोन निःशुल्क दिया जाता है।

आदिवासी दम्पत्ति प्रशिक्षण

आदिवासी दम्पत्तियों को भी दो माह का प्रशिक्षण दिया जाता है जिसमें उन्हें रु. 300.00 प्रति माह पारिश्रमिक तथा दो किलो नायलोन जाल बनाने के लिए प्रदान किया जाता है।

आदिवासी परियोजना क्षेत्र के सिंचाई जलाशयों का विकास

आदिवासी परियोजना के अंतर्गत आने वाले सिंचाई जलाशयों का भी क्रमिक रूप से विकास किया जाता है ताकि इस प्रकार के तालाबों से विकास के पश्चात आदिवासी सहकारी समितियों को मत्स्य विदोहर का कार्य उपलब्ध कराया जाकर रोजगार दिया जा सके। यह एक समयबद्ध कार्यक्रम है जिसमें (अ) मत्स्यबीज उत्पादन (ब) मत्स्यबीज संचय (स) मत्स्य संरक्षण सम्मिलित है। यह योजना कुछ चुने गये जलाशयों में लागू की गई है।

सघन मत्स्य पालन प्रदर्शन

मत्स्य उत्पादन में वृद्धि करने के उद्देश्य से सघन मत्स्य पालन प्रदर्शन का आयोजन कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है ताकि मत्स्य पालन की आधुनिक विधि अपनाकर प्रति हैक्टेयर अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

मत्स्य पालन कार्यक्रम को सुचारू एवं व्यवस्थित रूप से सम्पादित करने हेतु कुछ निर्माण कार्यों की आवश्यकता होती है जैसे कि प्रतिक्षण शैड निर्माण, संवर्धन ताल निर्माण तथा चायनीज हेचरी का निर्माण।

हरिजन विशेषांश योजना

इस योजनांतर्गत अनुसूचित जाति (हरिजन) मत्स्यपालकों का आदिवासी उपयोजना के समान ही प्रावधान किया गया है और उसी के अनुरूप विभिन्न कार्यक्रम में हरिजन मत्स्यपालकों को भी आदिवासियों के समान वित्तीय सहायता अनुदान दिया जाता है। यह योजना विशेष रूप से जबलपुर, छिंदवाड़ा, नरसिंहपुर तथा मंडला जिलों में कार्यान्वित है।

विश्व बैंक योजना (मत्स्य कृषक विकास अभिकरण)

कतिपय चुने हुए जिलों में विश्व बैंक योजना लागू की गई है। मध्य प्रदेश के जबलपुर संभाग में यह योजना केवल दो जिलों सिवनी और बालाघाट में वर्ष 1984-85 से कार्यान्वित की गई है। इस योजनांतर्गत पंचायत के तालाब मत्स्यपालन हेतु गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले समाज के कमजोर वर्ग के व्यक्ति को 10 वर्षीय पट्टे पर उपलब्ध कराए जाते हैं ताकि मत्स्योद्योग व्यवसाय के माध्यम से ऐसे व्यक्तियों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति में सुधार लाकर उन्हें गरीबी रेखा के ऊपर लाया जा सके। इस योजना के अंतर्गत निम्नांकित सुविधाएं दी जाती हैं :—

1. मत्स्यपालन हेतु पंचायत सिंचाई तालाबों को 10 वर्षीय पट्टे पर उपलब्ध कराया जाता है।
2. राष्ट्रीयकृत बैंक से वित्तीय सहायता दिलवायी जाती है।
3. वित्तीय सहायता 25 से 50 प्रतिशत स्वीकृत की जाती है।
4. मत्स्य कृषक को 15 दिवस प्रशिक्षण एवं इस अवधि में रुपये 9.92 प्रतिदिन पारिश्रमिक भत्ता दिया जाता है।
5. मत्स्य कृषकों को मत्स्य पालन विभाग से समय-समय पर तकनीकी मार्गदर्शन दिया जाता है।

सामान्य कार्यक्रम

मत्स्योद्योग के विकास की दृष्टि से प्रत्येक जिले में कुछ सामान्य कार्यक्रम भी चलाए जा रहे हैं जिससे मत्स्य विकास की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके और विकास को बल मिल सके। जैसे :—

1. उन्नत किस्म के मत्स्यबीज का उत्पादन,
2. सिंचाई जलाशयों का विकास एवं मत्स्योत्पादन,
3. सामान्य मछुआ सहकारी समितियों का गठन एवं आर्थिक सहायता,
4. निजी मत्स्य पालकों को अच्छा बीज उपलब्ध कराना,
5. समितियों एवं व्यक्तिगत लोगों को सिंचाई एवं पंचायत के तालाब को 10 वर्षीय पट्टे पर दिलवाना।

परियोजना अधिकारी
एकीकृत आदिवासी विकास
मध्यम परियोजना, जबलपुर.

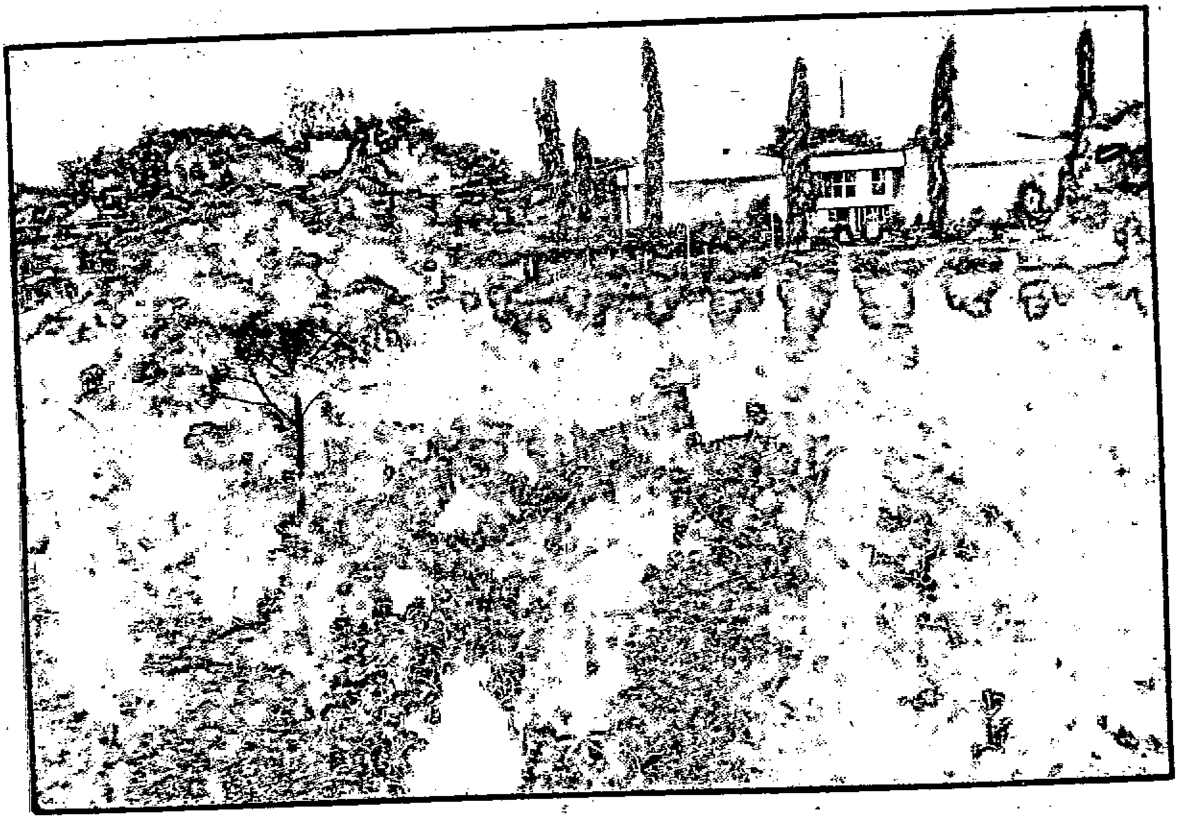

बीस-सूत्री कार्यक्रम 1986

17. पर्यावरण की रक्षा

हम:

- पर्यावरण की विकृति से होने वाले खतरों के प्रति जनता को और ज्यादा सजग बनायेंगे;
- पर्यावरण की रक्षा के लिए आम जनता का समर्थन प्राप्त करेंगे;
- इस मान्यता को बढ़ावा देंगे कि स्थाई विकास का अर्थ है प्राकृतिक संतुलन को कायम रखना; और
- परियोजनाओं के लिए उपयुक्त स्थान और तकनीक का चयन करेंगे।

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ.. नई दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D (DN) 98
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

बीस-सूत्री कार्यक्रम 1986

18. उपभोक्ता कल्याण

हम:

- गरीब तबके के लिए आवश्यक उपयोग की वस्तुओं को उन तक पहुंचाने की सहज और सरल व्यवस्था करेंगे;
- उपभोक्ता संरक्षण आंदोलन को प्रोत्साहित करेंगे;
- वितरण व्यवस्था को ऐसा नया रूप देंगे जिससे दी जाने वाली आर्थिक सहायता सबसे अधिक ज़रूरतमंदों को प्राप्त हो; और
- सार्वजनिक वितरण व्यवस्था को सुदृढ़ बनायेंगे।

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
वीरेन्द्रा प्रिंटर्स, हरध्यान सिंह रोड, करोल बाग
नई दिल्ली-110005 द्वारा मुद्रित